प्रकाशकीय

इस लघु पुस्तिका 'सत्य सनातन वैदिक ज्ञान' को पाठकों के हाथ समर्पित करते हुए अत्यंत हर्ष का अनुभव हो रहा है। इस पुस्तिका में विशेष रूप से युवा पीढ़ी को दृष्टि में रखते हुए विविध उपयोगी विषयों का संकलन किया गया है। यह पुस्तिका जनोपयोगी विभिन्न विषयों को स्वयं में समाहित किये हुए मात्र युवा ही नहीं अपितु सत्य के प्रकाश में आलोकित होने की इच्छुक हर आत्मा को राह दिखाने में 'गागर में सागर' के समान उपयोगी सिद्ध होगी, ऐसी हमें आशा है। इस पुस्तिका का उपयोग पाठक व्यक्तिगत स्वाध्याय के साथ-साथ निम्नलिखित प्रकार से और भी कर समाज को विशेष लाभ पहुँचाने का प्रयास करें, ऐसा हमारा सभी अपनों से विनम्र निवेदन है-

(क) घरों में प्रथम स्वाध्याय काल में बच्चों के साथ इसे क्रमशः पढ़ें व समझायें पश्चात् बच्चों से खेल-खेल में प्रश्नोत्तर शैली में इसके विषयों को पक्का करवायें।

(ख) इसी प्रकार से आस-पड़ोस के बच्चों को भी जोड़कर उनके मध्य पुरस्कार आदि का प्रोत्साहन देते हुए उपरोक्त प्रकार से ही प्रयास करें व करवायें।

(ग) अपने निकट के विद्यालयों में जाकर पुरस्कार घोषणा पूर्वक इस पुस्तिका पर परीक्षायें आयोजित करवायें आदि।

सत्य ज्ञान के बीज यदि बाल्यकाल में ही बच्चों के कोमल हृदयों में बो दिये जायें तो वे विकसित हो कर अवश्य ही अज्ञान, अंधविश्वास आदि बुराइयों से देश की इस नयी पौध की रक्षा करेंगे। इस पुस्तिका में प्रश्नोत्तर शैली में विविध आध्यात्मिक,

सैद्धान्तिक, व्यावहारिक व जनोपयोगी विषयों को रोचक रीति से प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्री राम, महान विद्वान महावीर हनुमान के वास्तविक स्वरूप दर्शन के साथ -2 अनेकों नवीन प्रश्नोत्तर व विषय यथा वेदों में विज्ञान, हवन की वैज्ञानिकता, नववर्ष कब, क्यों और कैसे, मत-मतान्तरों की अतार्किक मान्यताएँ, अहं ब्रह्मास्मि का वास्तविक अभिप्राय, धर्म व मत का स्पष्ट भेद, पुनर्जन्म, कर्मचक्र व कर्म विषयक मुख्य प्रश्न, शाकाहार आदि लेखन कर इस नवीन संस्करण में सम्मिलित किये गये हैं। शाकाहार को समझ पूर्वक स्वीकार करने व करवाने के लिए आपका हमसे **Facebook (iva-international vegetarian association)** व वेबसाइट (**www.ivaglobe.com**) के माध्यम से जुड़ना व जुड़वाना भी विशेष लाभकारी हो सकता है। आप हमारे **Youtube Channel** आत्मोन्नति **AATMONNATI** से भी जुड़ कर अवश्य लाभ उठायें।

अंत में इस पुस्तिका में संकलित सामग्री से संबंधित सभी सम्माननीय महानुभावों का हार्दिक धन्यवाद करते हुए हम परोक्ष-अपरोक्ष रूप से जुड़े सभी सहयोगियों व सेवा में समर्पित निःस्वार्थ दानदाताओं के उत्तम स्वास्थ्य, यशस्वी व सफल आध्यात्मिक जीवन हेतु प्रभु से हार्दिक प्रार्थना करते हैं।

शुभकामनाओं के साथ,

आचार्य आशीष आर्य
आचार्य आत्मप्रकाश आर्य
आत्मोन्नति वैदिक योग ध्यान
एवं सिद्धांत प्रशिक्षण केन्द्र
तपोभूमि, भड़ताना, जीन्द (हरियाणा)

।। ओ३म्।।

ओं भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि।
धियो यो नः प्रचोदयात्।। (यजु. 36/3)

मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्री राम

आत्मोन्नति केन्द्र, आर्यसमाज

हम भारतवासी अत्यंत सौभाग्यशाली हैं कि हमें अपने महान पूर्वज के रूप में मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम मिले हैं। ऐसे महापुरुष जिन्हें स्मरण करते ही हृदय श्रद्धा से भर जाता है, जिनका सम्पूर्ण दिव्य व्यक्तित्त्व हमारे व्यक्तित्त्व को भी दिव्य बनाने में अत्यंत सहयोगी है। आवश्यकता है भगवान श्री राम के उन महान सद्गुणों को आत्मसात् करने की जिन्हें धारण करके ही हम श्री राममय हो सकेंगे।

'रामस्य अयनं रामायणम्', श्री राम का अयोध्या से जाना और रावण वध करके वापिस अयोध्या पहुँच जाना, इस सम्पूर्ण घटनाक्रम का चित्रण ही 'रामायण' है।

रामायण की परिसमाप्ति श्री राम के अयोध्या आगमन पर हो जाती है। उत्तरकांड के नाम पर विभिन्न प्रक्षेपों को रामायण में डालने के अनर्थक प्रयास कर श्री राम के पावन चरित्र पर आक्षेप लगाने के प्रयास भी इस समाज में हुए हैं। श्रीराम के सम्पूर्ण जीवन चरित्र को प्रामाणिकता के साथ समझने के लिए महर्षि वाल्मीकि कृत रामायण एकमात्र अनुपम ग्रन्थ है।

रामायण कोई काल्पनिक इतिहास नहीं है। अंग्रेजों का सिद्धान्त रहा है **If you want to destroy a nation, destroy its history and the nation will perish of its own accord.** अर्थात् यदि तुम किसी राष्ट्र को नष्ट करना चाहते हो तो उसके इतिहास को समाप्त कर दो, राष्ट्र स्वयमेव नष्ट हो जायेगा। इसके आधार पर

पाश्चात्य ईसाई लेखकों ने हमारे सत्य इतिहास को नाना प्रकार से विकृत कर आर्य जाति को रसातल में पहुंचाने का प्रयत्न किया है। दूसरी ओर मानसिक दासता युक्त इस आधुनिक शिक्षा ने हमारे देश के लेखकों, प्रोफेसरों और रिसर्च स्कॉलरों के मस्तिष्कों को विकृत कर डाला है।

आइये हम आगे बढ़ें अपने मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्री राम के पावन गुणों को आत्मसात् करने के लिए, जो आदर्शों को असाधारण स्तर पर चरितार्थ कर, सदैव अपने कर्त्तव्यों में मर्यादित रह मर्यादा पुरुषोत्तम कहलाये, जो भग अर्थात् धर्म, ज्ञान, बल, वैराग्य और ऐश्वर्य से असाधारण रूप से युक्त हो भगवान विशेषण से विभूषित हैं, जो लगभग नौ लाख वर्ष पूर्व त्रेतायुग के अन्त में होकर भी आज जन-जन के हृदय में स्मरण किये जा रहे हैं। ऐसे श्री राम जो स्वयं प्रातः सायं संध्यावंदन कर कण-कण में रम रहे, सृष्टि रचयिता शिव अर्थात् कल्याण स्वरूप सर्वव्यापक निराकार परमेश्वर के उपासक थे, जिन्होंने परम पावन प्रभु ओ३म् परमेश्वर के द्वारा सृष्टि के प्रारम्भ में दिये गये वेदों का गुरुकुल में जाकर विधिवत् अध्ययन किया था।

ऐसे भगवान श्री राम के गुणों का वर्णन वाल्मीकि रामायण के एक प्रसंग से इस प्रकार है -

"प्रजा को सुख देने में श्री राम चन्द्रमा के तुल्य हैं,........ वे धर्मज्ञ, सत्यवादी, शीलयुक्त, ईर्ष्या से रहित, शान्त, दुखियों को सांत्वना देने वाले, मधुरभाषी, कृतज्ञ और जितेन्द्रिय हैं। ..... मनुष्यों पर कोई आपत्ति आने पर वह स्वयं दु:खी होते हैं और उत्सव के समय पिता की भाँति प्रसन्न होते हैं। ...... उनका क्रोध और प्रसन्नता कभी निरर्थक नहीं होते। वे मारने योग्य को मारते हैं और निर्दोषों पर कभी क्रोध नहीं करते।"

श्री राम के गुणों का वर्णन कैकेयी ने स्वयं किया है। जब श्री राम को राजतिलक देने का निर्णय हुआ तब सभी को अत्यन्त प्रसन्नता हुई थी। कैकेयी को यह समाचार उसकी दासी ने जाकर दिया। तब कैकेयी आनन्द विभोर हो गई और एक बहुमूल्य हार कुब्जा को देकर कहने लगी–''हे मन्थरे! तूने यह अत्यन्त आनन्ददायक समाचार सुनाया है। इसके बदले मैं तुम्हें और क्या दूँ।'' परन्तु मन्थरा ने द्वेष से भरकर कहा कि राम के राजा बनने से तेरा, भरत का और मेरा हित न होगा। तब कैकेयी राम के गुणों का वर्णन करते हुए कहती है – '' राम धर्मज्ञ, गुणवान, जितेन्द्रिय, सत्यवादी और पवित्र हैं तथा बड़े पुत्र होने के कारण वे ही राज्य के अधिकारी हैं। राम अपने भाईयों और सेवकों का अपनी संतान की तरह पालन करते हैं।''

श्री राम की महत्ता महर्षि वशिष्ठ जी के शब्दों में –

आहूतस्याभिषेकाय विसृष्टस्य वनाय च।
न मया लक्षितस्तस्य सवल्पोऽप्याकारविभ्रमः।।

(वाल्मीकी रामायण)

अर्थ – राज्याभिषेक के लिए बुलाए गए और वन के लिए विदा किए गए श्री राम के मुख के आकार में मैंने कोई भी अन्तर नहीं देखा। राज्याभिषेक के अवसर पर उनके मुख मण्डल पर कोई प्रसन्नता नहीं थी और वनवास के दु:खों से उनके चेहरे पर शोक की रेखाएँ नहीं थीं।

उदये सविता रक्तो रक्तश्चास्तमये तथा।
सम्पतौ च विपतौ च महतामेकरूपता।।

अर्थ – सूर्य उदय होता हुआ लाल होता है और अस्त होता हुआ भी लाल ही होता है। इसी प्रकार महापुरुष सम्पत्ति और विपत्ति में समान ही रहते हैं। सम्पत्ति प्राप्त होने पर हर्षित नहीं होते और विपत्ति पड़ने पर दु:खी नहीं होते।

वन को जाते हुए श्री राम अयोध्यावासियों से कहते हैं –"आप लोगों का मेरे प्रति जो प्रेम तथा सम्मान है मुझे प्रसन्नता तभी होगी अगर आप वह अब भरत के प्रति करें।

अपने नाना के यहाँ से अयोध्या लौटने पर जब भरत और शत्रुघ्न को पता लगा कि सारे पाप की जड़ मन्थरा है। तब शत्रुघ्न को उस पर बहुत क्रोध आया, उसने मन्थरा को पकड़ लिया और उसे भूमि पर पटक कर घसीटने लगा। तब भरत ने कहा – यदि इस कुब्जा को मारने का पता श्री राम को चल गया तो वह धर्मात्मा तेरे से और मेरे से बात तक न करेंगे। यह थी श्री राम की महानता और उसका प्रभाव।

श्री हनुमान जी अशोक वाटिका में सीता मां से श्री रामचन्द्र जी के विषय में कहते हैं– श्री रामचन्द्र जी यजुर्वेद में पारंगत हैं और बड़े-बड़े ऋषि भी इसके लिए उनको मानते हैं तथा वे धनुर्वेद और वेद वेदांगों में भी प्रवीण हैं। ऐसे मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्री राम के सच्चे जीवन चरित्र को हम वाल्मीकि रामायण से पढ़कर समझें, उनके सद्गुणों को आत्मसात् करें, धारण करें यही उनके नाम का सच्चा स्मरण है, तभी हम वास्तविक अर्थों में श्री राममय हो सकेंगे और निश्चित रूप में इस धरा पर पुनः राम राज्य स्थापित हो सकेगा।

गर्व से बोलिये –

मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्री राम की जय।

महान विद्वान महावीर श्री हनुमान

आत्मोन्नति केन्द्र, आर्यसमाज

वेद-वेदाङ्गों के महाविद्वान, महायोगी, महावीर हनुमान जिनकी भाषण शैली व व्यवहार से अतीव प्रसन्न होकर भगवान श्रीराम ने लक्ष्मण जी से हनुमान जी की विद्वता का जिस प्रकार वर्णन किया है वह अत्यंत प्रशंसनीय है। श्री राम कहते हैं :-

नानृग्वेदाविनीतस्य नायजुर्वेदधारिणः।
नासामवेदविदुषः शक्यमेव प्रभाषितुम् ।।
नूनं व्याकरणं कृत्स्नमनेन बहुधाश्रुतम्।
बहुव्याहरताऽनेन न किंचिदपशब्दितम्।। (किष्किन्धा. 3 सर्ग)

अर्थात् हे लक्ष्मण! जिस व्यक्ति ने ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद न पढ़े हों वह ऐसी संस्कृत भाषा नहीं बोल सकता है। निश्चित रूप से इन्होंने संपूर्ण व्याकरण को भी पढ़ा है, क्योंकि इनके भाषण में कहीं भी व्याकरण की दृष्टि से एक भी अशुद्धि नहीं हुई है।

ऐसे वेद-वेदाङ्गों के महाविद्वान वीर हनुमान जी को जो व्यक्ति पूँछ वाला बंदर मानकर पूजते हैं, उन्हें श्रीराम के उपर्युक्त वचनों पर गंभीरतापूर्वक अवश्य ध्यान देना चाहिये। क्या बंदर व्याकरणनिष्ठ, परिमार्जित संस्कृत भाषा उपरोक्त स्तर की बोल सकता है? बंदर का तो गला सिकुड़ा होता है, वह चीख सकता है, किलकारी मार सकता है, घुड़क सकता है पर स्पष्ट बोल नहीं सकता, व्याकरणनिष्ठ संस्कृत बोलने की तो कल्पना भी न करिये। रामायण में प्रयुक्त वानर, कपि, लांगूल आदि शब्दों के ठीक अर्थों को न समझने के कारण इतनी बड़ी भ्रान्ति समाज में व्यापक रूप से फैली हुई है।

वानर का अर्थ होता है वन में रहने वाला, वनस्थ अन्न फलादि का सेवन करने वाला। उस समय मनुष्यों की वन में रहने

वाली एक क्षत्रिय जाति वानर कहलाती थी। आज भी मनुष्यों में उपनाम के रूप में सिंह, भल्ला जैसे सरनेम प्रयोग में आते हैं। ऐसे उपनाम वालों को क्या शेर, भालू आदि समझा जाता है? आश्चर्य होता है कि श्री हनुमान जी के प्रति अत्यंत श्रद्धा रखने वाले व्यक्ति उनके यथार्थ स्वरूप को समझने के लिए वाल्मीकि रामायण स्वयं क्यों नहीं पढ़ते हैं, क्यों नहीं प्रयत्न करते हैं अपने आराध्य के सच्चे स्वरूप को समझने के लिए? आश्चर्य है।

इसी प्रकार से रामायण में आये 'कपि' शब्द का अर्थ बंदर ही नहीं होता है। 'कपि' शब्द के अनेक अर्थों में एक अर्थ है कँपाने वाला, अपनी शूरवीरता से दुष्टों को कँपा देने वाला तथा कपि शब्द का अर्थ श्रेष्ठ भी होता है। इसी प्रकार से रामायण में आये लांगूल शब्द का अर्थ पूँछ भी है, किन्तु रामायण में वानर जाति का एक आभूषण या चिह्न लांगूल कहलाता था। इसकी वे युद्ध के समय रक्षा प्राण-पण से किया करते थे। जैसे यज्ञोपवीत, शिखा आदि चिह्न रक्षा करने योग्य होते हैं। इसी प्रकार से वानर नाम वाली क्षत्रिय जाति में युद्ध के समय उपयोगी, कमर में बाँधने वाला वस्त्र या रस्सी जैसी सम्मानजनक चीज, रक्षणीय होती होगी, जिसे अज्ञानतावश पूँछ मान लिया गया।

अतः केसरी व अंजनी देवी के सुपुत्र वानर होते हुए भी बंदर नहीं थे। वे अपने समय में एक बहुत प्रतिष्ठित बाल-ब्रह्मचारी महान विद्वान शूरवीर योद्धा व महायोगी थे। ऐसा हमें शीघ्रातिशीघ्र प्रमाणपूर्वक निश्चय करके अपनी नयी पीढ़ी को यथार्थता से अवगत कराना चाहिये जिससे वे विधर्मियों के आक्षेपों का उत्तर देकर मात्र अपनी रक्षा ही न कर सकें अपितु विशेष रूप से सक्रिय होकर विधर्मियों को भी यथार्थ धर्म व सत्य समझा सकें।

आत्मोन्नति वैदिक योग ध्यान एवं सिद्धान्त प्रशिक्षण केन्द्र एक परिचय

यह केन्द्र राजधानी दिल्ली से लगभग 110 कि.मी. दूर हरयाणा प्रांत में जिला जीन्द में ग्राम भड़ताना से बाहर सुरम्य प्रकृति की गोद में, ध्यान–साधना के अनुकूल, वन सदृश एकांत वातावरण में साढ़े पांच एकड़ की तपोभूमि में स्थित है।

यह प्रशिक्षण केंद्र प्राचीन सांख्य योग परंपरा के अंतर्गत महर्षि पतंजलि द्वारा विरचित योगसूत्रों के आधार पर प्राचीन पद्धति से वैदिक योग एवं ध्यान के प्रायोगिक स्वरूप व विधियों को अध्यात्म जिज्ञासुओं की सेवा में प्रस्तुत करने हेतु प्रयत्नशील है।

यह संस्थान सनातन ऋषि परंपरा के सच्चे पोषक व प्रसारक महर्षि दयानंद सरस्वती जी की गहन ईश्वर आस्था, ईश ध्यान साधना व अकाट्य वैदिक सिद्धांतों का भी वैश्विक स्तर पर प्रतिपादन करने में संलग्न है।

इस केंद्र में स्त्री, पुरुष की पृथक्–पृथक् भोजन, आवासादि व्यवस्था के साथ नवनिर्मित पातंजल योग ध्यान मंदिर में 35 मेडीटेशन सेल्स (ध्यान लघुकक्ष) भी गहन ध्यान योगसाधना हेतु उपलब्ध हैं।

इस केंद्र में अध्यात्म–साधना पर केन्द्रित एक मासिक, द्विमासिक व त्रैमासिक पाठ्यक्रमों का संचालन अध्यात्म निष्ठ, ध्यान अनुभवों से युक्त, सुलझे हुए वैदिक योग ध्यान प्रशिक्षकों के निर्माणार्थ किया जाता है। इन पाठ्यक्रमों में प्रवेश आवासीय प्रथम एवं द्वितीय स्तर के "वैदिक योग ध्यान प्रशिक्षण शिविरों" को योग्यतापूर्वक कर लेने के उपरांत दिया जाता है।

इसके अतिरिक्त सिद्धांत निष्ठ, व्यवहार कुशल वैदिक प्रचारकों के निर्माणार्थ भी यह केंद्र अग्रसर है। जिसके लिये इस केन्द्र में "वैदिक प्रचारक निर्माण शिविर" (Vaidic Value Promoters Camp) आयोजित किये जाते हैं। इन शिविरों में प्रतिभागी को 10 मिनट की ओ३म् ध्यान पद्धति, गायत्री मंत्र, त्रैतवाद, वेद परिचय, पंचमहायज्ञ, धर्म व मत में भेद, आर्य मान्यताएँ व प्रचार में काम आने योग्य विभिन्न विषयों को माईक पर प्रस्तुति देने योग्य बनाया जाता है। इसके लिये उनकी Public Speaking Skills पर विशेष काम किया जाता है, जिससे वे माईक पर भय व संकोच से मुक्त हो आत्मविश्वास के साथ अपनी प्रस्तुतियाँ दे पायें। इस प्रकार के वैदिक प्रचारकों के निर्माण हेतु यह केन्द्र हिंदी, अंग्रेजी, फ्रेंच व प्रांतीय भाषाओं में देश–विदेश में भी प्रशिक्षण देने हेतु प्रयासरत

है। देश-विदेश में इस प्रकार के सप्तदिवसीय वैदिक प्रचारक निर्माण शिविर आयोजन हेतु केन्द्र से संपर्क किया जा सकता है।

इसके अतिरिक्त व्यस्त जीवन शैली वाले महानुभावों के लिये उनकी आवश्यकता के अनुरूप सप्ताहांत (Weekend) में विभिन्न आवश्यक विषयों यथा चिंता-तनाव मुक्त दिव्य जीवन निर्माण, संतान निर्माण (Parenting) सामंजस्यपूर्ण मधुर संबंध (Harmonizing Relationships), युवा मन की समस्यायें आदि विषयों पर शिविर व कार्यशालाओं का आयोजन केंद्र में शुक्रवार सायंकाल से रविवार मध्याह्न भोजन समय तक किया जाता है। इसी प्रकार से विद्यालयों के अध्यापक-अध्यापिका किस प्रकार से छात्र-छात्राओं का और अच्छे से निर्माण कर सकें, इस हेतु उनके लिये भी केंद्र विशेष कार्यक्रम प्रभावशाली रीति से आयोजित करता है।

इस केंद्र में आयोजित होने वाले समस्त कार्यक्रम पूर्व निर्धारित शुल्क (Fees) आदि से पूर्णतया मुक्त है। इन कार्यक्रमों में भोजन-आवासादि व्यवस्था हेतु प्रत्येक प्रतिभागी (समाज सेवा में समर्पित गृहत्यागियों को छोड़कर) द्वारा स्वैच्छिक योगदान, विद्यादान हेतु दक्षिणा व समर्थ व्यक्ति द्वारा पुण्यार्जन हेतु दान देने की वैदिक परंपरा का पूर्णतया अनुसरण किया जाता है।

यह केंद्र स्वाध्याय शिविरों एवं सत्रों के माध्यम से वेद, दर्शन व उपनिषदादि शास्त्रों के महत्वपूर्ण भाग एवं महर्षि दयानंद सरस्वती जी के ग्रंथों सत्यार्थ प्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका आदि का गहन अध्ययन कराकर अन्यों को सिखाने, पढ़ाने योग्य अध्यापकों, आचार्यों के निर्माण हेतु भी अग्रसर है।

इस केंद्र का एक मुख्य उद्देश्य देश, राष्ट्र व विश्व के भविष्य बच्चों व युवाओं को योग्य, चरित्रवान व जिम्मेदार नागरिक बनाने के लिये संस्कारित करना भी है। एतदर्थ युवा पीढ़ी में शुद्ध आचार, व्यवहार, वैज्ञानिक सोच, देशभक्ति, स्वस्थ दृष्टिकोण को विकसित करने व अंधविश्वास, पाखण्ड, नशा, मांसाहार आदि के निर्मूलन हेतु आस-पास के ग्रामों के स्थानीय विद्यालयों के विद्यार्थियों के लिये केन्द्र में समय-समय पर एक दिवसीय (प्रातः 10:15 से मध्याह्नोत्तर 3 बजे तक) कार्यशालाओं एवं परीक्षाओं का आयोजन भी निरंतर किया जाता है।

आत्मोन्नति केंद्र में आयोजित गतिविधियों की जानकारी केन्द्र के यूट्यूब चैनल-आत्मोन्नति **(AATMONNATI)** व **FB Page** आत्मोन्नति-**AATMONNATI** पर प्राप्त की जा सकती है। केंद्र से वाट्सएप नम्बर 7830815937 एवं 9416773617 पर संपर्क किया जा सकता है।

।। ओ३म्।।

विशुद्ध वैदिक सैद्धान्तिक ज्ञान

प्रस्तोता :- आत्मोन्नति केन्द्र, आर्यसमाज

प्र. 1. हमारे देश का प्राचीन नाम क्या था ?

उ. हमारे देश भारतवर्ष का प्राचीन नाम आर्यावर्त्त था।

प्र. 2. भारतवासियों का प्राचीन नाम क्या था ?

उ. भारतवासियों का प्राचीन नाम आर्य था।

प्र. 3. सृष्टि का प्राचीनतम धर्म कौन सा है ?

उ. सृष्टि का प्राचीनतम धर्म वैदिक धर्म है।

प्र. 4. वैदिक धर्म से क्या अभिप्राय है ?

उ. वैदिक धर्म से अभिप्राय है वेद में ईश्वर द्वारा निर्धारित मनुष्य के कर्त्तव्य कर्म, धारणीय सद्गुण व उनसे संबंधित सम्पूर्ण व्यवस्था विधि विधान एवं निर्देशन।

प्र. 5. वैदिक धर्मियों की धार्मिक पुस्तक कौन सी है ?

उ. वैदिक धर्मियों की धार्मिक पुस्तक वेद है।

प्र. 6. वेद कितने हैं ?

उ. चार : ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद।

प्र. 7. वेद कितने पुराने हैं ?

उ. वेद 1,96,08,53,123 वर्ष पुराने हैं। (सन् 2023 के आधार से)

प्र. 8. सनातन किसको कहते हैं ?

उ. जो सदा से चला आता है, उसे सनातन कहते हैं।

प्र. 9. चारों वेदों में कितने मन्त्र हैं ?

उ. चारों वेदों में 20379 मन्त्र हैं। ऋग्वेद में 10552, यजुर्वेद में 1975, सामवेद में 1875, अथर्ववेद में 5977 मन्त्र हैं।

प्र. 10. वेद की भाषा कौन सी है ?

उ. वेद की भाषा वैदिक संस्कृत है।

प्र. 11. वेदों के चार विभाग क्यों किये हैं ?

उ. भिन्न-भिन्न विद्याओं को जनाने के लिये वेदों के चार विभाग किये गये हैं।

प्र. 12. ऋग्वेद का विषय क्या है ?

उ. ऋग्वेद में सब पदार्थों के गुणों का प्रकाश किया गया है। अतः ऋग्वेद का मुख्य विषय पदार्थों का ज्ञान कराना है।

प्र. 13. यजुर्वेद का विषय क्या है ?

उ. ज्ञान के पश्चात् ही प्रवृत्ति अर्थात् कर्म होता है अतः ऋग्वेद से पदार्थों का ज्ञान कर लेने के पश्चात् कर्म क्या करना है, पदार्थों का ठीक-2 उपयोग कैसे करना है, यह जानकारी देना यजुर्वेद का मुख्य विषय है।

प्र. 14. सामवेद का विषय क्या है ?

उ. ऋग्वेद से पदार्थों का ज्ञान व यजुर्वेद से कर्तव्य बोध कराने वाले परमात्मा की भक्ति, ध्यान, उपासना कर जीव आनन्दित कैसे हो तथा स्वयं के शुद्ध आत्मस्वरूप को कैसे उपलब्ध हो, इसके लिए परमात्मा ने सामवेद दिया है।

प्र. 15. अथर्ववेद का विषय क्या है ?

उ. उपरोक्त तीनों वेदों में जो-जो विद्या हैं, उन सबके शेष भाग की पूर्ति हेतु तथा सब विद्याओं की रक्षा और संशय निवृत्ति के लिये परमात्मा ने चौथा अथर्ववेद दिया है। अतः अथर्ववेद का विषय विज्ञान अर्थात् विशिष्ट ज्ञान है।

प्र. 16. वेदों का ज्ञान मनुष्यों को कैसे मिला ?

उ. वेदों का ज्ञान सृष्टि के आदि में ईश्वर ने चार ऋषियों को प्रदान किया। जिनका नाम अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा था।

प्र. 17. वेद पुस्तक रूप में कब बने ?

उ. राजा ईक्ष्वाकु के काल में वेदों को लिपिबद्ध किया गया। (महर्षि दयानन्द कृत उपदेश मंजरी पुस्तक के आधार से)

प्र. 18. वैदिक काल में विश्व के लोग किस ईश्वर को मानते थे ?

उ. वैदिक काल में विश्व के लोग केवल एक निराकार सर्वव्यापक ईश्वर को मानते थे।

प्र. 19. वैदिक साम्राज्य के काल में विश्व शासन की भाषा कौन सी थी ?

उ. वैदिक साम्राज्य के काल में विश्व शासन की भाषा संस्कृत थी।

प्र. 20. वैदिक काल में शिक्षा प्रणाली कौन सी थी ?

उ. वैदिक काल में शिक्षा प्रणाली गुरुकुलीय थी।

प्र. 21. वैदिक धर्म में व्यक्तिगत जीवन को कितने भागों में बाँटा गया है ?

उ. वैदिक धर्म में व्यक्तिगत जीवन को चार भागों में बाँटा गया है। जिन्हें चार आश्रम कहते हैं।

प्र. 22. चार आश्रमों के नाम क्या-क्या हैं ?

उ. चार आश्रमों के नाम निम्न हैं- ब्रह्मचर्य आश्रम, गृहस्थ आश्रम, वानप्रस्थ आश्रम, संन्यास आश्रम।

प्र. 23. वैदिक धर्म में कर्म के आधार पर मानव समाज को कितने भागों में बाँटा गया है और उनके नाम क्या हैं ?

उ. वैदिक धर्म में कर्म के आधार पर मानव समाज को चार भागों में बाँटा गया है जिन्हें चार वर्ण कहते हैं। जिनके नाम हैं- ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र।

प्र. 24. क्या वैदिक धर्म में ईश्वर का अवतार लेना बताया गया है ?

उ. वैदिक धर्म में ईश्वर का अवतार लेना नहीं बताया गया है क्योंकि सर्वव्यापक, निराकार ईश्वर का अवतार लेना संभव नहीं है।

प्र. 25. वैदिक धर्मी के लिए कौन से कार्य करने अनिवार्य हैं ?

उ. वैदिक धर्मी के लिए पंचमहायज्ञ करने अनिवार्य हैं।

प्र. 26. यज्ञ शब्द का क्या अर्थ है ?

उ. यज्ञ का अर्थ है श्रेष्ठ कर्म। श्रेष्ठ कार्यों को पूर्ण पुरुषार्थ के साथ निष्काम भावना से करना यज्ञ है।

प्र. 27. महायज्ञ किसे कहते हैं ?

उ. प्रतिदिन करने योग्य श्रेष्ठ कार्यों को महायज्ञ कहते हैं।

प्र. 28. पंचमहायज्ञों के नाम कौन-कौन से हैं ?

उ. पंचमहायज्ञों के नाम ब्रह्मयज्ञ (विवेकख्याति का अभ्यास कर आत्म साक्षात्कार करना, ईश्वर का ध्यान करना व वेद आदि शास्त्रों को पढ़ना और पढ़ाना), देवयज्ञ (हवन व वृक्षारोपण आदि करना), पितृयज्ञ (माता-पिता, बड़े व्यक्तियों की सेवा करना), अतिथियज्ञ (विद्वान, संन्यासी, समाजसेवी व्यक्तियों का सत्कार करना), बलिवैश्वदेवयज्ञ (असहाय मनुष्यों व पशु-पक्षी आदि की सेवा करना एवं शाकाहार का प्रचार - प्रसार करना)।

प्र. 29. वैदिक धर्म में जीवन को श्रेष्ठ बनाने के लिए और कौन से विधि-विधान बताए गए हैं ?

उ. वैदिक धर्म में जीवन को श्रेष्ठ बनाने के लिए 16 संस्कारों को करना अनिवार्य बतलाया गया है।

प्र. 30. क्या वैदिक धर्म में त्रुटि, भूल, दोष, पाप के लिए ईश्वर की ओर से क्षमा का विधान है ?

उ. वैदिक धर्म में त्रुटि, भूल, दोष, पाप के लिए ईश्वर की ओर से क्षमा का विधान नहीं है।

प्र. 31. वैदिक धर्मियों का अभिवादन शब्द कौन सा है ?

उ. वैदिक धर्मियों का अभिवादन शब्द 'नमस्ते' है।

प्र. 32. वेदों के अंग कितने हैं और उनके नाम क्या हैं ?

उ. वेदों के अंग 6 हैं और उनके नाम - शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द और ज्योतिष हैं।

प्र. 33. वेद के उपांग कितने हैं और उनके नाम क्या हैं ?

उ. वेद के उपांग 6 हैं और उनके नाम निम्न हैं- योगदर्शन, सांख्यदर्शन, वैशेषिकदर्शन, न्यायदर्शन, वेदान्तदर्शन और मीमांसादर्शन।

प्र. 34. वेदों के आधार पर ऋषियों द्वारा बनाया गया सामाजिक विधि-विधान तथा आचार संहिता का प्रसिद्ध, प्राचीन और

महत्वपूर्ण धार्मिक ग्रन्थ कौन सा है ?

उ. वेदों के आधार पर ऋषियों द्वारा बनाया गया सामाजिक विधि-विधान तथा आचार संहिता का प्रसिद्ध, प्राचीन और महत्त्वपूर्ण धार्मिक ग्रन्थ 'मनुस्मृति' है। जो वर्तमान में कई प्रक्षेपों, मिलावटों के साथ उपलब्ध है।

प्र. 35. क्या वैदिक धर्म में छुआछूत, जातिभेद, जादूटोना, डोराधागा, ताबीज, शकुन, फलित ज्योतिष, जन्मकुण्डली, हस्तरेखा, नवग्रह पूजा, नदी स्नान से पाप मुक्ति, बलिप्रथा, सतीप्रथा, मांसाहार, मद्यपान, बहुविवाह, भूत-प्रेत, मृतकों के नाम पिण्डदान, भविष्यवाणी आदि का विधान है ?

उ. वैदिक धर्म में छुआछूत, जातिभेद, जादूटोना, डोराधागा, ताबीज, शकुन, फलित ज्योतिष, जन्मकुण्डली, हस्तरेखा, नवग्रह पूजा, नदी स्नान से पाप मुक्ति, बलिप्रथा, सतीप्रथा, मांसाहार, मद्यपान, बहुविवाह भूत-प्रेत, मृतकों के नाम पिण्डदान, भविष्यवाणी आदि का विधान नहीं है।

प्र. 36. वैदिक धर्म में मनुष्य जीवन का अंतिम लक्ष्य/उद्देश्य/ प्रयोजन क्या बताया गया है ?

उ. वैदिक धर्म में मनुष्य जीवन का अंतिम लक्ष्य/ उद्देश्य/ प्रयोजन समस्त दु:खों से छूटना और पूर्ण आनन्द को प्राप्त करना बताया गया है।

प्र. 37. वैदिक धर्म में कर्मफल सिद्धान्त क्या है ?

उ. जो मनुष्य शरीर, मन, इन्द्रियों से जितने भी अच्छे-बुरे कर्म करता है उसे उन सबका फल सुख-दु:ख के रूप में अवश्य ही मिलता है।

प्र. 38. क्या वेदों के अनुसार बुरे कर्मों के फल माफ हो सकते हैं ?

उ. वेदों के अनुसार बुरे कर्मों के फल किसी प्रकार से भी माफ नहीं हो सकते हैं।

प्र. 39. तो फिर दान-पुण्य, जप-तप, सेवा-परोपकार आदि का क्या

लाभ होता है ?

उ. दान-पुण्य, जप-तप, सेवा-परोपकार आदि का अलग से अच्छा फल मिलता है। इससे बुरे कर्मों के फल न कम होते हैं न माफ होते हैं।

प्र. 40. वेद किस दार्शनिक सिद्धांत का प्रतिपादन करते हैं ?

उ. वेद त्रैतवाद के सिद्धांन्त का प्रतिपादन करते हैं अर्थात् ईश्वर, जीव (आत्मा) व प्रकृति (मूल कण) ये तीन अनादि व नित्य हैं।

प्र. 41. धर्म से क्या अभिप्राय है ?

उ. धर्म संस्कृत भाषा का शब्द है। इसका एक अर्थ 'गुण' होता है। किसी भी पदार्थ के गुण Properties को उस पदार्थ का धर्म कहा जाता है। जैसे जल का गुण शीतलता, जल का धर्म कहलाता है।

धर्म शब्द का दूसरा अर्थ 'कर्त्तव्य' है। जैसे माता-पिता की सेवा करना हमारा कर्त्तव्य है अर्थात् हमारा धर्म है।

धर्म का तीसरा अर्थ है 'धारण करना'। सद्गुणों को धारण करना भी धर्म कहलाता है। धैर्य आदि को धारण करना धर्म है।

प्र. 42. मनुष्य का धर्म क्या है ?

उ. मनुष्य का धर्म है मनुष्यता। जैसे पानी का धर्म है शीतलता, वैसे ही मनुष्य का धर्म है मानवता Humanity ।

प्र. 43. कैसे पता चले कि व्यक्ति में मनुष्यता है अथवा नहीं ?

उ. मनुष्यता के लक्षणों को जानकर।

प्र. 44. महर्षि मनु जी के अनुसार मनुष्यता रूपी धर्म के दस लक्षण क्या हैं ?

उ. 1. धृति- सदा धैर्य रखना, घबराना नहीं। 2. क्षमा-निन्दा, स्तुति, मान-अपमान, हानि-लाभ आदि में भी सहनशील बने रहना। 3. दम - मन को सदा अधर्म से रोककर धर्म में ही प्रवृत्त रखना। 4. अस्तेय-चोरी का त्याग करना। 5. शौच-जल आदि से बाहर की शुद्धि, राग, द्वेष, पक्षपात के त्याग से भीतर की शुद्धि-पवित्रता रखनी। 6. इन्द्रिय निग्रह-इन्द्रियों को अधर्माचरण से रोककर उन्हें

सदा धर्म में ही लगाए रखना। 7. धी – सद्बुद्धि रखना। 8. विद्या – यथार्थ ज्ञान प्राप्त करना। 9. सत्य – जो पदार्थ जैसा है, उसे वैसा ही समझना वैसा ही कहना और वैसा ही व्यवहार में लाना सत्य है। 10. अक्रोध – क्रोध आदि दोषों को छोड़कर शांति, प्रेम आदि गुणों को ग्रहण करना। इन दस लक्षणों को धारण करने से ही व्यक्ति वास्तव में मनुष्य बनता है।

प्र. 45. धर्म का सार क्या है?

उ. जैसा व्यवहार हम दूसरों से स्वयं के लिये नहीं चाहते हैं वैसा व्यवहार हम दूसरों के साथ नहीं करें। यही धर्म का सार है।

प्र. 46. हम धर्मानुयायी बनें या मतानुयायी?

उ. सम्पूर्ण विश्व में प्रेम, शांति, सद्भावना की स्थापना के लिये हमें धर्मानुयायी ही बनना चाहिये, मतानुयायी नहीं।

प्र. 47. धर्म और मत में क्या भेद है?

उ. धर्म universal रूप से सब के लिये समान होता है। सार्वभौमिक होता है। सत्य बोलना, दूसरों को अन्यायपूर्वक कष्ट न देना आदि मनुष्य मात्र के लिये समान होने से धर्म है। धर्म का प्रथम उपदेश ईश्वर द्वारा वेद के माध्यम से प्रथम मनुष्य पीढ़ी में दिया जाता है।

मत मनुष्य मात्र के लिये समान नहीं होते हैं। किसी समूह विशेष के मनुष्यों के द्वारा निर्धारित मान्यताएँ जिनमें सभी universal अर्थात् सार्वभौमिक रूप से स्वीकार नहीं होती वे मत के अन्तर्गत आती हैं। जैसे किसी अमुक प्रकार के वस्त्र पहनना, चिह्नों का उपयोग करना, कोई ऐसा पूजा-पाठ करना जो मनुष्य मात्र के द्वारा तार्किक रूप से स्वीकार करने योग्य न हो आदि बातें मत के अंतर्गत हैं। मत समय-समय पर विभिन्न मनुष्यों के द्वारा परिस्थिति विशेष में चलाये गये। उनमें कुछ अच्छी बातें भी होती हैं और बहुत सारी अतार्किक बातें भी होती हैं। धर्म एक होता है और मत अनेक।

प्र. 48. वर्तमान में प्रचलित मत-मतान्तरों की अतार्किक मान्यताएँ कौन सी हैं ?

उ. 1. पुर्नजन्म को ना मानना।

2. ईश्वर को सातवें आसमान, चौथे आसमान, परमधाम, बैकुंठधाम आदि स्थानों पर मानना।

3. स्वर्ग (जन्नत) आदि की अतार्किक कल्पना करके गलत कार्यों में प्रवृत्त होना।

4. प्राणी हत्या आदि में पुण्य मानना।

5. इस सृष्टि को बनाने वाली परम शक्ति को अनुभव करने में पैगंबर, ईश्वर पुत्र, गुरु आदि की मध्यस्थता मानना।

6. स्त्रियों को पुरुषों से हीन समझना व उनका अपमान करना, उन्हें पर्दे में ढक कर रखना, खतना करना, पुरुष की पसली से स्त्री की उत्पत्ति मानना।

7. अपने मत, मान्यता को आगे बढ़ाने के लिए दूसरों की हत्या करने में भी पुण्य मानना।

8. जड़ पदार्थों पर चादर चढ़ाना, मोमबत्ती जलाना, पंखा करना, उन्हें खिलाना-पिलाना आदि।

9. मौसेरे, ममेरे, चचेरे आदि भाई-बहनों के साथ विवाह कर लेना।

10. आत्मा परमात्मा के अस्तित्व को ही स्वीकार न करना।

11. सृष्टि को मात्र 5 हजार साल पुरानी मानना, स्त्री का स्त्री, पुरुष का पुरुष, गाय का गाय, घोड़े का घोड़ा ही अगले जन्मों में बनना मानना, निराकार आत्मा को तारे के समान चमकता हुआ मस्तक के मध्य रूपवान ज्योति बिंदु मानना, परमात्मा को सर्वव्यापक ना मानना।

12. कयामत की रात मुर्दों का जिंदा होना मानना आदि।

प्र. 49. पारसी मत कितना पुराना है ?

उ. पारसी मत लगभग 4500 वर्ष पुराना है।

प्र. 50. यहूदी मत कितना पुराना है ?

उ. यहूदी मत लगभग 4000 वर्ष पुराना है।

प्र. 51. जैन, बौद्ध मत का काल कितना पुराना है ?

उ. जैन, बौद्ध मत लगभग 2500 वर्ष पुराने हैं।

प्र. 52. शंकराचार्य मत का काल कितना पुराना है ?

उ. शंकराचार्य मत, अद्वैतवाद का काल लगभग 2300 वर्ष पुराना है।

प्र. 53. हिन्दू-पुराण मत का काल कितना पुराना है ?

उ. हिन्दू-पुराण मत लगभग 2400 वर्ष पुराना है।

प्र. 54. ईसाई मत कितना पुराना है ?

उ. ईसाई मत लगभग 2000 वर्ष पुराना है।

प्र. 55. इस्लाम मत कितना पुराना है ?

उ. इस्लाम मत लगभग 1400 वर्ष पुराना है।

प्र. 56. सिक्ख मत कितना पुराना है ?

उ. सिक्ख मत लगभग 500 वर्ष पुराना है।

प्र. 57. ब्रह्माकुमारी, राधास्वामी, गायत्री परिवार, स्वामी नारायण, आनन्द मार्ग... इत्यादि मत-पंथ-सम्प्रदाय कितने वर्ष पुराने हैं ?

उ. देश में सैकड़ों की संख्या में प्रचलित वर्तमान सम्प्रदाय 100-150 वर्ष पूर्व के आसपास के काल के ही हैं।

प्र. 58. ईश्वर को मूर्ति रूप में बनाकर पूजना कब से आरम्भ हुआ ?

उ. ईश्वर को मूर्ति रूप में बनाकर पूजना लगभग 2500 वर्ष पूर्व से आरम्भ हुआ। इससे पूर्व लोग निराकार ईश्वर की ही उपासना करते थे।

प्र. 59. अनादि किसे कहते हैं ?

उ. जिस वस्तु की उत्पत्ति न हो उसे अनादि कहते हैं।

प्र. 60. अनादि वस्तुएँ कितनी हैं ?

उ. अनादि वस्तुएँ तीन हैं–आत्मा, परमात्मा व प्रकृति (सत्त्व, रज व तम रूप)

प्र. 61. ईश्वर का मनुष्यों के साथ क्या सम्बन्ध है ?

उ. ईश्वर के मनुष्यों के साथ पिता–पुत्र, माता–पुत्र, गुरु–शिष्य, राजा–प्रजा, साध्य–साधक, उपास्य–उपासक, व्याप्य–व्यापक आदि अनेक सम्बन्ध हैं।

प्र. 62. ईश्वर के मुख्य कर्म कौन–कौन से हैं ?

उ. ईश्वर के मुख्य कर्म 5 हैं– 1. संसार को बनाना, 2. संसार का पालन करना, 3. संसार का विनाश करना, 4. वेदों का ज्ञान देना और 5. अच्छे–बुरे कर्मों का न्यायानुसार फल देना।

प्र. 63. क्या श्रीराम और श्रीकृष्ण, ईश्वर/परमात्मा हैं ? उनके नाम के पहले भगवान विशेषण लगाया जाता है।

उ. वे ईश्वर / परमात्मा नहीं हैं। जैसे धनवान का अर्थ होता है धन वाला वैसे भगवान शब्द का अर्थ है– भग अर्थात् धर्म, ज्ञान, वैराग्य, यश, ऐश्वर्य, शौर्य तथा श्री इन गुणों वाला। किसी महापुरुष के नाम से पूर्व भगवान विशेषण लगाने का यही आशय है कि साधारण मनुष्यों की अपेक्षा उनमें ये गुण अधिक थे परन्तु वे इस संसार को बनाने वाले भगवान नहीं थे। महापुरुष के रूप में महान आत्मायें कई हो सकती हैं परन्तु इस सृष्टि को बनाने व चलाने वाले भगवान तो एक ही हैं जिनका मुख्य नाम ओ३म् है।

प्र.64. ईश्वर का स्वरूप क्या है ?

उ. ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टि का कर्त्ता है।

प्र. 65. ईश्वर का नाम विष्णु क्यों है ?

उ. सर्वत्र व्यापक होने से ईश्वर का नाम विष्णु है।

प्र. 66. ईश्वर का नाम शिव क्यों है ?

उ. ईश्वर सबका कल्याण करते हैं इसलिए ईश्वर का नाम शिव है।

प्र. 67. ईश्वर का नाम गणेश क्यों है ?

उ. ईश्वर प्रकृति आदि जड़ और सब जीवों तथा सभी प्रसिद्ध पदार्थों के स्वामी, पालन करने हारे हैं। इससे ईश्वर का नाम गणेश है।

प्र. 68. ईश्वर का नाम शंकर क्यों है ?

उ. ईश्वर अपने भक्तों का कल्याण करने वाले हैं। इसलिए कल्याणकर्त्ता होने से ईश्वर का नाम शंकर है।

प्र. 69. वेदों में ईश्वर का क्या स्वरूप बतलाया गया है ?

उ. वेदों में ईश्वर को सर्वव्यापक, सर्वज्ञ, निराकार, न्यायकारी, कर्मफलदाता आदि गुणों वाला बताया गया है।

प्र. 70. ईश्वर प्रतिपल हमें देखते हैं, क्या इसमें वेद का कोई स्पष्ट प्रमाण है ?

उ. हाँ, बहुत सारे प्रमाण हैं। देखिये निम्न मन्त्र–

आ पश्यति प्रति पश्यति परा पश्यति पश्यति।
दिवमन्तरिक्षमाद् भूमिं सर्वं तद् देवि पश्यति।। अथर्ववेद 4.20.1

(देवि) हे सर्वत्र परिपूर्ण दिव्यशक्तिवाले परमेश्वर! आप (आपश्यति) सबको सामने से देख रहे हो (प्रतिपश्यति) पीछे से देख रहे हो (परापश्यति) दूर से देख लेते हो (पश्यति) अन्दर से भी देखते हो (आत्) और (दिवमन्तरिक्षम् भूमिम्) सूर्यलोक, अन्तरिक्ष लोक एवं भूमि आदि (सर्वम् पश्यति) सबको देखते हैं।

प्र. 71. आत्मा व परमात्मा में क्या अंतर हैं ?

उ. आत्मायें अनेक हैं तथा स्वरूप से अल्पज्ञ, अल्पशक्तिमान व एकदेशी हैं । आत्मायें अपने अच्छे–बुरे कर्मों के अनुसार उत्तम व निकृष्ट योनियों में तब तक जन्म पाती रहती हैं , जब तक वे अपने अज्ञान को नष्ट नहीं कर देती हैं। इस संपूर्ण ब्रह्माण्ड को बनाने व चलाने वाले परमात्मा एक हैं , केवल एक ही हैं परमात्मा स्वरूप से सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान व सर्वव्यापक हैं। आत्मायें कर्मानुसार

शरीर धारण कर बंधन में आती हैं परन्तु परमात्मा शरीर धारण कर कभी बंधन में नहीं आते हैं। परमात्मा, आत्माओं के कर्मों का न्यायानुसार फल देते हैं तथा सृष्टि के आरम्भ में भौतिक व आध्यात्मिक विज्ञान से युक्त वेदों का ज्ञान देते हैं ।

प्र. 72. क्या आत्मा परमात्मा का अंश है ?

उ. है भी और नहीं भी। मुख्य अर्थ में अंश नहीं है, गौण अर्थ में अंश है। जैसे लड्डू का टुकड़ा, लड्डू का मुख्य अर्थ में अंश है वैसे आत्मा, परमात्मा का टुकड़ा नहीं है परमात्मा के अखण्ड व निरवयव होने से। अतः लड्डू के टुकड़े के समान मुख्य अर्थ में आत्मा, परमात्मा का अंश नहीं है। देखें वेदान्त दर्शन सूत्र अंशो नानाव्यपदेशादन्यथा.... 2/3/43 पर शांकरभाष्य-अंश इवाशः। नहि निरवयवस्य मुख्योंऽशः सम्भवति। अर्थात् अंश के समान अंश है क्योंकि निरवयव पदार्थ का मुख्य अर्थ में अंश संभव नहीं है।

हाँ गौण अर्थ में अंश है जैसे माँ के गर्भ में शिशु स्वतंत्र सत्ता वाला होते हुए भी उसका अंश कहा जाता है ऐसे ही आत्मा भिन्न सत्ता वाला होते हुए भी सदा परमात्मा के ही एक देश या गर्भ में वास करने वाला होने से गौण अर्थ में उसका अंश कहा जाता है।

प्र. 73. प्रार्थना से क्या अभिप्राय है ?

उ. अपने सामर्थ्य के उपरान्त ईश्वर के सम्बन्ध से जो विज्ञान आदि प्राप्त होते हैं, उनके लिए ईश्वर से याचना करना प्रार्थना करना कहलाता है।

प्र. 74. उपासना से क्या तात्पर्य है ?

उ. ईश्वर को सर्वव्यापक, अपने को व्याप्य जानके, ईश्वर के समीप हम और हमारे समीप ईश्वर है, ऐसा निश्चय योगाभ्यास से साक्षात् करना, उपासना करना कहलाता है।

प्र. 75. सगुण निर्गुण स्तुति से क्या तात्पर्य है ?

उ. जो-जो गुण परमेश्वर में हैं उनसे युक्त और जो-जो गुण नहीं हैं उनसे पृथक् मानकर परमेश्वर की प्रशंसा करना 'सगुण-निर्गुण स्तुति' कहलाती है।

प्र. 76. आत्मा साकार है या निराकार ?

उ. आत्मा एक निराकार चेतन तत्त्व है। जो संख्या में अनेक व अल्प शक्ति सामर्थ्य वाला है।

प्र. 77. परमात्मा साकार है या निराकार ?

उ. परमात्मा निराकार, सर्वव्यापक व अनन्त सामर्थ्य वाला महान चेतन तत्त्व है। इस सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को रचने वाला परमात्मा एक ही है।

प्र. 78. 'अहं ब्रह्मास्मि का वास्तविक अर्थ क्या है ?

उ. इसका अर्थ है - (अहम्) मैं (ब्रह्म) अर्थात् ब्रह्मस्थ (अस्मि) हूँ। अर्थात् मैं ब्रह्म में स्थित हूँ। यहाँ तात्स्थ्योपाधि है अर्थात् किसी में स्थित पदार्थ को उसी के नाम से कह देना। जैसे आटो रिक्शा चालक को जो आटो रिक्शा में स्थित है उसे ऐ आटो रिक्शा! नाम से पुकारा जाता है। इसी प्रकार यहाँ ब्रह्म में स्थित स्वयं को ब्रह्म कहा जा रहा है। वास्तव में हम ब्रह्म नहीं हैं अपितु अल्प शक्ति, सामर्थ्य वाली आत्मायें हैं। जो बन्धन में आती-जाती हैं, चिंता तनाव व मोह ग्रस्त होती हैं। फिर भी यदि दुराग्रह वश कोई स्वयं को ब्रह्म ही माने तो उससे पूछना चाहिए की वह ब्रह्म होकर इस शरीर के बंधन में क्यों आया है? माया के चक्कर में आकर अज्ञान ग्रस्त क्यों हुआ? अविद्या ग्रस्त होकर सांसारिक सुख-दुख क्यों भोग रहा है? आदि। वास्तव में अल्पशक्तिमान आत्मा कभी भी ब्रह्म जैसा सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान व सर्वज्ञ नहीं हो सकता। भ्रान्ति व अज्ञान से युक्त होकर शंकराचार्य मतानुयायी नवीन वेदांती स्वयं के ब्रह्म होने का भ्रामक प्रचार कर अनजाने में समाज को अकर्मण्य बना रहे हैं।

प्र. 79. ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना का क्या फल है ?

उ. स्तुति से ईश्वर में प्रीति तथा स्वयं के गुण-कर्म-स्वभाव का

सुधरना व सुधारना होता है। प्रार्थना से निरभिमानता, उत्साह और ईश्वरीय सहायता का मिलना तथा उपासना से परब्रह्म से मेल होकर परमेश्वर के गुण-कर्म-स्वभाव के सदृश स्वयं के गुण-कर्म-स्वभाव पवित्र हो जाते हैं तथा उपासक का आत्मिक बल इतना बढ़ेगा कि वह पर्वत के समान दुख प्राप्त होने पर भी न घबरायेगा व सबको शान्तिपूर्वक सहन कर सकेगा।

प्र. 80. गायत्री मन्त्र का अर्थ क्या है ?

उ. ओं भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्।।

अर्थ - हे सर्वव्यापक, सर्वज्ञ, सर्वरक्षक परमात्मा! आप प्राणों के भी प्राण, दुःख विनाशक व सुखप्रदाता हैं। हम इस सुन्दर जगत की रचना करने वाले आप देव के वरण करने योग्य भर्ग स्वरूप अर्थात् शुद्ध, पवित्र, शांत, निष्पाप व ज्ञानस्वरूप को स्वयं में धारण करते हैं। हे प्रभो! हमारी बुद्धियों को सन्मार्ग में प्रेरित करें जिससे हम शुद्ध, निष्पाप व शांत रह सकें।

प्र. 81. क्या गायत्री मन्त्र का लाभ हर मनुष्य ले सकता है ?

उ. हाँ, हर मनुष्य स्त्री, पुरुष बिना भेद-भाव के गायत्री मन्त्र से लाभ ले सकते हैं। ईश्वर ने बिना भेद-भाव के मनुष्य मात्र के लिए वेदों का ज्ञान दिया है।

प्र. 82. गायत्री मन्त्र हमें क्या प्रेरणा देता है ?

उ. गायत्री मन्त्र हमें परमात्मा के भर्ग स्वरूप अर्थात् शुद्ध, पवित्र, शांत, निष्पाप व ज्ञानस्वरूप को स्वयं में धारण करने की प्रेरणा देता है। अर्थात् हम जागरूकता पूर्वक जीवन के हर उतार-चढ़ाव, सफलता-असफलता, सुख-दुःख में अंदर शुद्ध, शांत व निष्पाप बने रहें।

प्र. 83. योग किसे कहते हैं ?

उ. चित्त की वृत्तियों के रुक जाने व आत्मा की स्वयं और परमात्मा को अनुभव करने की स्थिति को योग कहते हैं।

प्र. 84. योग के अंग कितने हैं ?

उ. आठ : यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि।

प्र. 85. क्या योगाभ्यास से जीव 'ब्रह्म' हो सकता है ?

उ. नहीं ! स्वभाव से अल्पज्ञ और अल्प शक्तिमान होने से जीव, ब्रह्म कभी भी नहीं हो सकता। वह अपने सामर्थ्य के अनुसार ईश्वरीय गुणों को धारण करके महान् अवश्य हो सकता है।

प्र. 86. क्या स्त्रियाँ योगिनी बन सकती हैं ?

उ. हाँ अवश्य। योगी बनने का सामर्थ्य स्त्री और पुरुष दोनों में है।

प्र. 87. मुमुक्षुत्व क्या है ?

उ. जैसे भूख-प्यास लगने पर अन्न, जल के अतिरिक्त कुछ भी अच्छा नहीं लगता वैसे मुक्ति के साधन और मुक्ति से भिन्न दूसरे में प्रीति न होना मुमुक्षुत्व कहलाता है।

प्र. 88. मन जड़ है या चेतन ?

उ. मन प्रकृति से बना है इसलिए वह भी जड़ है।

प्र. 89. हठयोग के अंतर्गत कौन सी क्रियायें आती हैं ?

उ. हठयोग के अंतर्गत कपालभाँति, भस्त्रिका, अनुलोम-विलोम, नाड़ीशोधन, भ्रामरी, नौलि, जालंधर, उड्डियान बंध, कुण्डलिनी जागरण, अष्टचक्र छेदन, शाम्भवी मुद्रा व शक्तिपात आदि क्रियायें आती हैं।

प्र. 90. पातंजल योग के अंतर्गत क्या-क्या आता है ?

उ. पातंजल योग के अंतर्गत यम, नियम, आसन, बाह्य, आभ्यांतर, स्तम्भवृत्ति व बाह्याभ्यांतरविषयाक्षेपी प्राणायाम, पर-अपर वैराग्य, विवेकख्याति, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि व सम्प्रज्ञात एवं असम्प्रज्ञात योग आते हैं।

प्र. 91. क्या पतंजलि ऋषि के नाम से हठयोग की क्रियायें सिखाना उचित है ?

उ. नहीं। ऐसा करना अनुचित है। इससे सत्य सनातन वैदिक परम्परायें विकृत होती हैं, एवं जिज्ञासु व्यक्ति शुद्ध पातंजल योग से वंचित रह जाते हैं।

प्र. 92. योग के प्रथम अङ्ग 'यम' के कितने व कौन से विभाग हैं ?

उ. 'यम' के पाँच विभाग हैं - 1. अहिंसा - सभी प्राणियों के साथ वैरभाव त्याग कर प्रेम पूर्वक व्यवहार करना व किसी को अन्यायपूर्वक कष्ट न देना अहिंसा है। 2. सत्य - प्रमाणपूर्वक जैसा ज्ञान मन में हो, वैसा ही वाणी से बोलना व शरीर से आचरण करना सत्य है। 3. अस्तेय - स्वामी की आज्ञा के बिना किसी की वस्तु को न लेना, किसी के हक, अधिकार, सम्मान को न लेना अस्तेय अर्थात् चोरी न करना है। 4. ब्रह्मचर्य - उपस्थेन्द्रिय पर संयम करना। 5. अपरिग्रह - अनावयश्क वस्तुओं, विचारों, भावनाओं व अधिकारों का संग्रह न करना।

प्र. 93. योग के द्वितीय अङ्ग 'नियम' के कितने व कौन से विभाग हैं ?

उ. 'नियम' के भी पाँच विभाग हैं - 1. शौच - शरीर, वस्त्र, खान-पान आदि से बाह्य व मन को राग-द्वेष रहित रख आंतरिक शुद्धता रखना। 2. संतोष - परिश्रम करने के उपरान्त प्राप्त उपलब्धि में मन को शान्त रखना व आशावादी रहकर अभीष्ट लक्ष्य की प्राप्ति के लिये आगे से आगे पुरुषार्थ करते रहना। 3. तप - सत्य धर्म का पालन करते हुए हानि-लाभ, मान-अपमान आदि द्वन्द्वों को प्रसन्नतापूर्वक सहन करना तप है। 4. स्वाध्याय - मोक्ष प्रापक वेद, दर्शन, उपनिषद् आदि सद्ग्रन्थों का अध्ययन करना, अर्थभावना सहित ओ३म् का जप व आत्मनिरीक्षण करना स्वाध्याय है। 5. ईश्वर प्रणिधान - अपनी आत्मा को परमेश्वर की आज्ञानुकूल समर्पित कर देना व समस्त क्रियाओं के फलस्वरूप ईश्वर को ही चाहना अन्य किसी सांसारिक फल की कामना मन में न रखना, ईश्वर प्रणिधान अर्थात् ईश्वर समर्पण है।

प्र. 94. आध्यात्मिक शुद्ध ज्ञान कैसे उत्पन्न किया जाता है ?

उ. आध्यात्मिक शुद्ध ज्ञान शरीर, मन आदि जड़ पदार्थों को जड़ तथा स्वयं को अनुभव करने वाली शक्ति के रूप में चेतन अनुभव करने व ईश्वर के ध्यान से उत्पन्न होता है।

प्र. 95. आध्यात्मिकता शब्द का क्या अर्थ है ?

उ. आध्यात्मिकता शब्द का अर्थ है आत्मा, परमात्मा, मन, बुद्धि, मोक्ष, बन्ध, पुनर्जन्म, कर्म और उनका फल, संस्कार, समाधि इत्यादि विषयों का ज्ञान-विज्ञान प्राप्त करना और तदनुसार आचरण करना।

प्र. 96. सभी दु:खों से छूटना कैसे संभव है ?

उ. आध्यात्मिक अज्ञान के नष्ट हो जाने पर सभी दु:खों से छूटना संभव है।

प्र. 97. आध्यात्मिक अज्ञान कैसे नष्ट होता है ?

उ. आध्यात्मिक अज्ञान शरीर के यथार्थ स्वरूप व स्वयं तथा ईश्वर को अनुभव करने से नष्ट होता है।

प्र. 98. समाधि की अवस्था कैसे प्राप्त होती है ?

उ. मन को राग-द्वेष रहित कर वर्त्तमान पदार्थों को अनुभव करने से समाधि की अवस्थायें प्राप्त होती हैं।

प्र. 99. मन, इन्द्रियों पर पूर्ण नियंत्रण कैसे होता है ?

उ. विवेकख्याति के अभ्यासपूर्वक राग-द्वेष रहित मन को वर्त्तमान में रखने से सहज मनोनियंत्रण की स्थिति प्राप्त होती है।

प्र. 100. आत्मा का साक्षात्कार कब होता है ?

उ. विवेकख्याति से भी विरक्त हो जाने पर आत्मा की स्वयं में स्थिति हो जाती है।

प्र. 101. विवेकख्याति क्या है ?

उ. बुद्धि, मन, इन्द्रिय व शरीर से स्वयं को पृथक् अनुभव करना विवेकख्याति है।

प्र. 102. मनुष्य दु:खी क्यों होता है ?

उ. मनुष्य राग, द्वेष और मोह अर्थात् अज्ञान के कारण दु:खी होता है।

प्र. 103. वैराग्य का अर्थ क्या है ?

उ. वैराग्य का अर्थ है राग-द्वेष से रहित, एषणाओं से रहित, लौकिक सुख लेने की इच्छा से रहित होकर निष्काम भावना से कर्त्तव्य कर्मों को करना।

प्र. 104. मनुष्य के मन में अशांति, भय, चिंता क्यों उत्पन्न होते हैं ?

उ. मन को राग द्वेष रहित न रखने के कारण व अज्ञानता के कारण।

प्र. 105. आत्मनिरीक्षण से क्या अभिप्राय है ?

उ. प्रतिदिन स्वयं में धैर्य, संतोष, शांति आदि सद्‌गुणों के स्तर का मूल्यांकन करते हुए उत्साहित होकर उन्हें और बढ़ाने के लिए संकल्पित होना तथा जीवन में जो दोष, न्यूनताएं आदि हुए हैं उनको भी ईमानदारी से स्वीकारते हुए उनसे ऊपर उठने के लिए आशावान् होकर संकल्पबद्ध होना आत्मनिरीक्षण करना कहलाता है।

प्र. 106. समाज में लोगों के साथ व्यवहार कैसे करना चाहिए ?

उ. समाज में चार प्रकार के व्यक्ति होते हैं- उनके साथ चार प्रकार का व्यवहार करना चाहिए। 1. जो व्यक्ति ईमानदारी से अर्जित धनादि के द्वारा सुखी और समृद्ध हैं उनके साथ मित्रता रखनी चाहिए। 2. जो व्यक्ति धनादि से रहित, निर्धन, दुखी हैं उनके ऊपर दया करके उनका यथाशक्ति सहयोग करना चाहिए। 3. जो व्यक्ति त्यागी, तपस्वी, सेवाभावी हैं उनको देख करके मन में प्रसन्न होना चाहिए और उनका आदर-सत्कार करना चाहिए। 4. जो व्यक्ति दुष्ट हैं उनके साथ उपेक्षा करनी चाहिए। अर्थात् न उनसे बैर रखें न प्रेम करें।

प्र. 107. आर्य समाज की स्थापना कब और किसने की ?

उ. आर्य समाज की स्थापना चैत्र शुक्ल प्रतिपदा, 7 अप्रैल सन् 1875 में महर्षि दयानन्द सरस्वती जी महाराज ने मुम्बई में की।

प्र. 108. महर्षि दयानन्द जी ने आर्य समाज को क्यों स्थापित किया ?

उ. वैदिक ध्यान/योग पद्धति एवं वेदों का प्रचार करने के लिए तथा समाज में व्याप्त कुरीतियों को दूर करने के लिए आर्य समाज की स्थापना की।

प्र.109.स्वामी जी ने सत्यार्थ प्रकाश ग्रन्थ क्यों बनाया ?

उ. स्वामी दयानन्द जी के शब्दों में "मेरा इस ग्रन्थ को बनाने का प्रयोजन सत्यासत्य अर्थ का प्रकाश करना है अर्थात् जो सत्य है उसको सत्य और जो मिथ्या है उसको मिथ्या ही प्रतिपादित करना है।"

प्र.110.आर्य समाज के बारे में पं. मदन मोहन मालवीय के क्या विचार थे ?

उ. मालवीय जी ने कभी कहा था- "जब आर्य समाज दौड़ता है, तो हिन्दू समाज चलता है। जब आर्य समाज बैठ जाता है, तो हिन्दू समाज सो जाता है, यदि आर्य समाज सो गया तो हिन्दू समाज मर जायेगा।"

प्र. 111.क्या आर्यसमाज मूर्ति का खंडन करता है ?

उ. नहीं। आर्यसमाज मूर्तियों का खंडन अर्थात् मूर्तियों के हाथ-पाँव, सिर, नाक आदि तोड़ना कभी नहीं करता है। अपितु वह ऐसा करने को सर्वथा गलत मानता है। यह सब मुगल आक्रांताओं ने मुगल काल में किया है।

प्र. 112.फिर आर्यसमाज मूर्तियों का विरोध क्यों करता है ?

उ. नहीं। आर्यसमाज मूर्तियों का विरोध नहीं करता है। आर्यसमाज यही समझाता है कि ये मूर्तियाँ हमारे जिन ऐतिहासिक महापुरुषों की हैं, हमें सबसे पहले उनके वास्तविक प्रामाणिक जीवन चरित्रों को पढ़-समझकर, मूर्तियों को देख उन्हें स्मरण कर उनके गुणों को धारण कर उनके चरित्र की पूजा करनी चाहिए और मूर्तियों पर फल, दूध, मेवें, वस्त्र आदि चढ़ाने के स्थान पर हमें ईश्वर के द्वारा बनायी गयी जीवित मूर्तियों असहाय, अनाथ, अपंग मनुष्यादि एवं पशु,पक्षी आदि की सेवा में ऐसे पदार्थों को समर्पित कर अपने महापुरुषों के पदचिह्नों पर चल सच्चे ईश्वर की भक्ति करनी चाहिए।

प्र. 113.सर्वव्यापक होने से ईश्वर मूर्ति में भी हैं तो मूर्ति पूजा का विरोध क्यों ?

उ. पूर्व प्रश्न के उत्तर में दिए गए स्पष्टीकरण के साथ-साथ यह भी समझें कि सर्वव्यापक होने से ईश्वर आप आत्मा में भी हैं तथा आप परमात्मा को वहीं अनुभव कर पायेंगे जहाँ आप स्वयं भी हों। सोचकर बताइये कि आप शरीर के भीतर हैं या मूर्ति में ? उ. शरीर में। इसलिए आर्यसमाज का समझाना कि आप पांतजल योग की रीति से आँख बंदकर शरीर के अंदर जाना सीखिये और अपने प्रियतम प्रभु को अपने भीतर अनुभव करना सीखें बिलकुल तर्कसंगत व ठीक है । यह भी स्पष्टता रहे कि ईश्वर मूर्ति में व्यापक अवश्य हैं, परन्तु मूर्ति ईश्वर नहीं है।

प्र. 114.तो क्या कब्रों या मकबरों पर चादर चढ़ाना भी गलत है ?

उ. हाँ, आप अब बिलकुल ठीक समझ रहें हैं, यह सब भी अतार्किक व गलत है।

प्र. 115.मुमुक्षु न्यून से न्यून कितना ध्यान करें ?

उ. महर्षि दयानन्द सरस्वती सत्यार्थ प्रकाश के नौंवे समुल्लास में बताते हैं कि – नित्यप्रति न्यून से न्यून दो घण्टा पर्यन्त मुमुक्षु ध्यान अवश्य करें, जिससे भीतर के मन आदि पदार्थ साक्षात् हों।

प्र. 116.पृथ्वी पर सबसे पूर्व मनुष्य कहाँ उत्पन्न हुए ?

उ. पृथ्वी पर सबसे पूर्व मनुष्य तिब्बत में उत्पन्न हुए।

प्र. 117.आर्य किसे कहते हैं ?

उ. उत्तम गुण-कर्म-स्वभाव वाले मनुष्य को आर्य कहते हैं।

प्र. 118.क्या आर्य लोग भारतवर्ष में बाहर से आये थे ?

उ. आर्य लोग भारतवर्ष में बाहर से नहीं आये थे।

प्र. 119.इतिहास में ऐसा पढ़ाते हैं कि आर्य बाहर से आये थे ?

उ. इतिहास में गलत पढ़ाया जा रहा है, आर्य लोग भारत के ही मूलनिवासी थे। शास्त्रों में कोई ऐसा प्रसंग या उल्लेख नहीं जिससे यह सिद्ध हो सके कि आर्य बाहर से आए हैं।

प्र.120. आर्यों का राज्य कब था ?

उ. सृष्टि के आरम्भ से लेकर अब से लगभग 5000 वर्ष पूर्व तक आर्यों का चक्रवर्ती राज्य था।

प्र.121. भूगोल में विद्या कहाँ से फैली ?

उ. महर्षि दयानन्द के शब्दों में "जितनी विद्या भूगोल में फैली है, सब आर्यावर्त्त देश से मिश्र वालों में, उनसे यूनान, रोम, यूरोप, अमेरिका आदि में फैली है।"

प्र.122. यह संसार कब बना ?

उ. संसार 1,96,08,53,123 वर्ष पूर्व बना। (सन् 2023 के आधार पर)

प्र. 123. इस संसार की आयु कितनी है ?

उ. इस संसार की कुल आयु 4 अरब 32 करोड़ वर्ष है।

प्र. 124. रामायण का काल कितना पुराना है ?

उ. रामायण का काल लगभग 10 लाख वर्ष पुराना है।

प्र. 125. महाभारत का काल कितना पुराना है ?

उ. महाभारत का काल लगभग 5200 वर्ष पुराना है।

प्र. 126. चक्रवर्ती सम्राट किसे कहते हैं ?

उ. सम्पूर्ण पृथ्वी पर शासन करने वाले राजा को चक्रवर्ती सम्राट कहते हैं।

प्र. 127. चक्रवर्ती सम्राट कब हुए थे ?

उ. सृष्टि के प्रारम्भ से लेकर महाभारत पर्यन्त इस पृथ्वी पर चक्रवर्ती सम्राट ही होते रहे हैं।

प्र. 128. अन्तिम चक्रवर्ती राजा कौन थे ?

उ. युधिष्ठिर भारतवर्ष के अन्तिम चक्रवर्ती राजा थे।

प्र. 129. यूरोप व अमेरिका का संस्कृत भाषा में पुरातन नाम क्या है ?

उ. यूरोप को 'हरिवर्ष' तथा अमेरिका को संस्कृत में 'पाताल' कहते हैं। श्रीकृष्ण तथा अर्जुन 'पाताल' में जाके महाराज युधिष्ठिर के यज्ञ में उद्दालक ऋषि को लेकर आये थे।

प्र. 130. अर्जुन का विवाह किससे हुआ था ?

उ. अर्जुन का विवाह 'पाताल' में जिसको अमेरिका कहते हैं, वहाँ के राजा की लड़की उलूपी के साथ हुआ था।

प्र. 131. संस्कार किसे कहते हैं और 16 संस्कारों के नाम क्या हैं ?

उ. जिससे शरीर, मन और आत्मा उत्तम बनते हैं उसको संस्कार कहते हैं। 16 संस्कारों के नाम निम्न हैं- गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्तोन्नयन, जातकर्म, नामकरण, अन्नप्राशन, निष्क्रमणम्, चूड़ाकर्म, कर्णवेध, उपनयन, वेदारम्भ, समावर्तन, विवाह, वानप्रस्थ, संन्यास और अन्त्येष्टि।

प्र. 132. पाप किसे कहते हैं ?

उ. अधर्माचरण को पाप कहते हैं।

प्र. 133. अधर्माचरण किसे कहते हैं ?

उ. ईश्वर की आज्ञाओं, शास्त्रों के विधि-विधानों, महापुरुषों के निर्देशों तथा अपनी पवित्र आत्मा में उत्पन्न होने वाले विचारों के विपरीत व्यवहार करने का नाम अधर्माचरण है।

प्र. 134. धर्म की सामान्य परिभाषा क्या है ?

उ. धर्म की सामान्य परिभाषा यह है कि जो व्यवहार अपने को अच्छा लगे वह दूसरों के प्रति करें और जो व्यवहार अपने को अच्छा न लगे वह दूसरों के प्रति न करें।

प्र. 135. जब कर्मों का फल मिलना ही है तो ईश्वर की उपासना करने से क्या लाभ है ?

उ. ईश्वर की उपासना करने से बुद्धि पवित्र होती है और आनन्द की प्राप्ति होती है। आत्मिक बल मिलता है। मन में उत्तम विचार उत्पन्न होते हैं। परिणामस्वरूप मनुष्य भविष्य में बुरे कर्म नहीं करता है अथवा कम करता है।

प्र. 136. क्या हमारा भविष्य निश्चित है और इसको कोई जानकर बता सकता है ?

उ. हमारा भविष्य निश्चित नहीं है और इसको कोई भी जानकर बता नहीं सकता है।

प्र. 137. क्या अज्ञान = मिथ्याज्ञान के कारण किए गए बुरे कर्मों का फल भी मिलता है ?

उ. जी हाँ, अज्ञान = मिथ्याज्ञान के कारण किए गए बुरे कर्मों का फल भी अवश्य मिलता है। हमारा कर्तव्य है कि अज्ञान को दूर करें।

प्र. 138. कौन सा कार्य अच्छा है इसका पता कैसे लग सकता है ?

उ. किसी कार्य के करने से पहले, करते समय, करने के बाद मन में आनन्द, उत्साह, प्रसन्नता, शान्ति सन्तोष उत्पन्न होता हो, साथ ही जिससे व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामाजिक और राष्ट्र की किसी प्रकार की हानि न हो, ऐसे कार्य को अच्छा मानना चाहिए।

प्र. 139. कौन सा कार्य बुरा है इसका पता कैसे लग सकता है ?

उ. किसी कार्य के करने से पहले, करते समय, करने के बाद मन में भय, शंका, लज्जा उत्पन्न होती हो, साथ ही जिससे व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामाजिक और राष्ट्र की कोई हानि होती हो, ऐसे कार्य को बुरा मानना चाहिए।

प्र. 140. कार्यों में सफलता के क्या उपाय हैं ?

उ. कार्यों में सफलता के निम्न उपाय हैं– 1. कार्य को करने की मन में तीव्र इच्छा 2. कार्य को पूरा करने के लिए पर्याप्त साधनों का संग्रह 3. कार्य को सरलता से, शीघ्रता से और सुन्दर रूप में करने की यथार्थ विधि को जानना 4. कार्य के पूरा होने तक पूर्ण पुरूषार्थ करते रहना 5. कार्य करते हुए मार्ग में आने वाले बाधा, कष्ट, अभाव, विरोध, प्रतिकूलताओं आदि को प्रसन्नतापूर्वक सहन करना, हताश–निराश, खिन्न न होना 6. ईश्वर से कार्य की सफलता के लिए ज्ञान, बल, साहस, उत्साह, पराक्रम आदि की प्राप्ति के लिए प्रार्थना करना।

प्र. 141. मनुष्य जीवन की असफलता का लक्षण क्या है ?

उ. जिस मनुष्य के जीवन में सुख, शान्ति, सन्तोष, तृप्ति, निर्भीकता, स्वतन्त्रता नहीं होती है वह जीवन असफल होता है। चाहे उसके पास में कितना ही धन, सम्पत्ति, रूप, बल, विद्या, प्रतिष्ठा, सम्मान, यश, कीर्ति क्यों न हो।

प्र. 142. मनुष्य जीवन की सफलता का लक्षण क्या है ?

उ. जिस मनुष्य के जीवन में सुख, शान्ति, सन्तोष, तृप्ति, निर्भीकता, स्वतन्त्रता होती है वह जीवन सफल होता है। चाहे उसके पास में धन, सम्पत्ति, रूप, बल, विद्या, प्रतिष्ठा, सम्मान, यश, कीर्ति थोड़ी क्यों न हो या न भी क्यों न हो उसका जीवन सफल होता है।

प्र. 143. किस प्रकार का जीवन चलाने से मनुष्य को अधिकतम सुख की प्राप्ति हो सकती है ?

उ. निम्न प्रकार का जीवन चलाने से मनुष्य को अधिकतम सुख की प्राप्ति हो सकती है- आदर्श दिनचर्या, शीघ्र जागरण, भ्रमण, व्यायाम, स्नान, यज्ञ, ईश्वर का ध्यान, उत्तम पुस्तकों का स्वाध्याय, सत्य का पालन, राग-द्वेष रहित व्यवहार, दूसरों के धन और अधिकारों को ग्रहण न करने की इच्छा, परोपकार, समाज-राष्ट्र की उन्नति हेतु संगठन, त्याग, सेवा, बलिदान की भावना, मन में उत्तम कार्यों को करने और बुरे कार्यों को न करने का दृढ़ संकल्प, सात्विक भोजन, मधुर व्यवहार, आत्मनिरीक्षण, महापुरुषों, विद्वानों का सत्संग, संयम, त्याग, तपस्या आदि गुण-कर्म-स्वभाव को धारण करने से जीवन में अधिकतम सुख की प्राप्ति हो सकती है।

प्र. 144. क्या पुनर्जन्म होता है इसमें क्या प्रमाण है ?

उ. पुनर्जन्म होता है इसमें निम्न प्रमाण है- 1. जन्मते ही मनुष्य-पशु आदि के बच्चे दूध पीते हैं। 2. चार-छः मास का शिशु माँ की गोद में आँखें बंद किए हुए अथवा सोते हुए कभी प्रसन्न होना, कभी भयभीत होना। 3. संसार में ऊँची-नीची योनियाँ 4. बाल्यावस्था में बौद्धिक स्तर का भेद देखकर यह अनुमान होता है कि जीवात्मा का पुनः जन्म होता है।

प्र. 145. मरने के बाद कितने काल में मनुष्य नया जन्म लेता है ?

उ. ईश्वरीय व्यवस्था अनुसार साधारणतया तत्काल, अल्प समय में ही कर्मानुसार योनि में गर्भवास हो जाता है। किसी विशेष स्थिति में समय अधिक भी लग सकता है। उस अवस्था में आत्मा ईश्वरीय व्यवस्था के अधीन रहने के कारण मनोकल्पित भूत, प्रेतादि बनकर अन्यों की हानि नहीं कर सकती है।

प्र. 146. मरने के बाद मनुष्य को कौन सा जन्म मिलता है ?

उ. मरने के बाद आधे या आधे से अधिक अच्छे कर्म हो तो मनुष्य जन्म मिलता है और आधे से अधिक बुरे कर्म हो तो पशु-पक्षी कीट पतंग आदि का जन्म मिलता है।

प्र. 147. क्या मनुष्य की आयु निश्चित है ?

उ. मनुष्य की आयु निश्चित नहीं है। आयु को घटाया-बढ़ाया जा सकता है।

प्र. 148. आयु को बढ़ाने के क्या उपाय हैं ?

उ. आयु को बढ़ाने के निम्न उपाय हैं- सात्त्विक भोजन, नियमित दिनचर्या, ब्रह्मचर्य का पालन, पूर्ण निद्रा, व्यायाम, अच्छी पुस्तकों को पढ़ना, सत्संग, विद्वान और श्रेष्ठ मनुष्यों के साथ मित्रता, ईश्वर पर श्रद्धा और विश्वास, सतर्कता, सावधानी, शान्ति, प्रसन्नता, धैर्य, दया, क्षमा आदि का प्रयोग। इन उपायों से मनुष्य अपनी आयु को बढ़ा सकता है।

प्र. 149. मनुष्य अल्प आयु में/जल्दी/अकाल क्यों मर जाता है ?

उ. तामसिक भोजन, अनियमित दिनचर्या, असंयम, व्यभिचार, अधिक जागना, स्वाध्याय-सत्संग न करना, बुरे व्यक्तियों के साथ मित्रता, नास्तिकता, असावधानी, क्रूरता, अशान्ति, चिन्ता, शोक, भय, रोग आदि से मनुष्य की शारीरिक मानसिक शक्तियाँ कम हो जाती हैं और वह अल्प आयु में - अकाल मृत्यु को प्राप्त हो जाता है।

प्र. 150. मनुष्य का सामाजिक-राष्ट्रीय कर्तव्य क्या है ?

उ. मनुष्य को अपनी व्यक्तिगत और पारिवारिक उन्नति के साथ-साथ समाज और राष्ट्र के लोगों में विद्यमान अज्ञान, अन्याय और अभाव को दूर करने का तन-मन-धन से पूर्ण प्रयास करते रहना चाहिए क्योंकि समाज-राष्ट्र के सभी व्यक्तियों के

उन्नत हुए बिना कोई भी व्यक्ति या परिवार पूर्ण रूपेण सुख, शान्ति, सुरक्षा, निश्चिन्तता, निर्भीकता आदि को प्राप्त नहीं कर सकता। इसलिए समाज, राष्ट्र की उन्नति के लिए भी संगठित होकर के, संस्था बनाकर सार्वजनिक कल्याण के कार्यों को भी त्याग, तपस्या के साथ करना चाहिए।

प्र. 151. सन्तोष से क्या अभिप्राय है ?

उ. धर्म से पुरुषार्थ करने पर जो प्राप्त हुआ है उसे शान्त भाव से स्वीकार करना, लाभ में न प्रसन्नता करना और हानि में न ही अप्रसन्नता करना तथा आलस्य छोड़कर उत्साहपूर्वक धर्म के मार्ग में आगे से आगे सदा पुरुषार्थ करते रहना संतोष है।

प्र. 152. किसी उत्पन्न हुए पदार्थ के कितने कारण होते हैं ?

उ. उत्पन्न हुए पदार्थ के तीन कारण होते हैं – उपादान कारण, निमित्त कारण व साधारण कारण।

प्र. 153. उत्तम दाता कौन है ?

उ. जो देश, काल और पात्र को जानकर सत्यविद्या, धर्म की उन्नति हेतु परोपकारार्थ दान देवे, वह उत्तम दाता है।

प्र. 154. क्या दान, दक्षिणा, भेंट, पूजा, सेवा, जप, तप, तीर्थ, ध्यान आदि के द्वारा बुरे कर्मों के फलों को नष्ट या कम किया जा सकता है ? यदि नहीं तो इन सबका क्या लाभ है ?

उ. दान, दक्षिणा आदि से बुरे कर्मों के फलों को नष्ट नहीं किया जा सकता है अपितु उनको करके पुण्य अर्जन किया जा सकता है। आगे बुरे कर्म न हों ऐसे संस्कार बनाए जा सकते हैं।

प्र. 155. क्या प्रायश्चित करके बुरे कर्मों के फलों से बचा जा सकता है ? यदि नहीं, तो फिर प्रायश्चित की क्या उपयोगिता है ?

उ. प्रायश्चित करके बुरे कर्मों के फलों से बचा नहीं जा सकता है किन्तु प्रायश्चित करने से बुरे कर्म करने के संस्कार दुर्बल बनते हैं नष्ट होते हैं और संस्कार दुर्बल बनते हैं तो भविष्य में बुरे कर्म करने की इच्छा कम होती जाती है।

।। ओ३म्।।

अन्य महत्त्वपूर्ण प्रश्न

प्र. 01. क्या हनुमान जी बन्दर थे और उनकी पूँछ थी ?

उ. नहीं। हनुमान जी बन्दर नहीं थे। वे शास्त्रों के प्रकाण्ड विद्वान एक महापुरुष व महावीर योद्धा थे। वाल्मीकि रामायण के अनुसार हनुमान जी वानर जाति से थे। यह उस समय एक मनुष्य जाति का नाम था। वानर अर्थात् वन में रहने वाले नर, मनुष्य। उनकी पूँछ नहीं थी, अपितु पूछ अर्थात् समाज में प्रतिष्ठा थी। वह कमर में एक रस्सी जैसा अस्त्र लपेटा करते थे।

प्र. 02. क्या श्रीकृष्ण की 16108 पत्नियाँ (रानियाँ) थी।

उ. नहीं। वास्तविकता यह है कि श्रीकृष्ण ने भौमासुर नाम के चरित्रहीन राजा की कैद से 16108 नारियों को मुक्त कराकर अपने राज्य में आश्रय एवं संरक्षण दिया। उनको वही सुविधायें व सम्मान उपलब्ध कराया जो राजाओं की पत्नियों (रानियों) को अभीष्ट होता है। पति शब्द का व्यापक अर्थ होता है - संरक्षक जैसे, राष्ट्रपति, सभापति।

प्र.03. हमारा शरीर कैसा होना चाहिए ?

उ. हमारा शरीर वज्र की भाँति सशक्त व सबल होना चाहिये, बीमार होकर जीना पाप व अपराध है।

प्र.04. मन को प्रसन्न कैसे रखें ?

उ. सुखियों के प्रति मैत्री, दु:खियों के प्रति करुणा, पुण्यशील व्यक्तियों के प्रति मृदुता एवं पापकर्मशीलों (दुष्टों) के प्रति उपेक्षा रखने से मन प्रसन्न रहता है।

प्र.05. मनुष्य और पशु आदि के शरीर में जीव एक सा है या भिन्न-भिन्न जाति के हैं ?

उ. जीव एक से हैं परन्तु पाप और पुण्य के फल से मलिन और पवित्र हो जाते हैं।

प्र.06. मनुष्य का जीव पशु आदि में और स्त्री का जीव पुरुष में,

पुरुष का जीव स्त्री में आते हैं या नहीं ?

उ. हाँ, आता जाता है। जब पाप अधिक बढ़ जाते हैं पुण्य न्यून होता है तब मनुष्य का जीव पशु आदि नीच शरीर में जाता है। जब धर्म अधिक और अधर्म न्यून होता है तब मनुष्य का शरीर मिलता है।

प्र.07. तीर्थ किसे कहते हैं ?

उ. जिससे दु:खों से पार उतरे। सत्य भाषण, विद्या, सत्संग, धर्मानुष्ठान, योगाभ्यास, पुरुषार्थ, विद्या, दान आदि जितने शुभ कर्म हैं उसी को तीर्थ कहते हैं, इतर जल स्थल आदि तीर्थ नहीं हैं।

प्र.08. श्राद्ध तथा तर्पण किसे कहते हैं ?

उ. श्रद्धापूर्वक जीवित माता-पिता की भोजन, वस्त्र, चिकित्सा आदि से सेवा करने को श्राद्ध कहते हैं एवं माता-पिता की सद् इच्छाओं की पूर्ति करके तथा स्वयं के जीवन को उत्तम बनाकर उन्हें आन्तरिक तृप्ति व संतोष देने को तर्पण कहते हैं।

प्र.09. योगीराज श्री कृष्ण विवाह के बाद कितने वर्ष तक ब्रह्मचर्य पूर्वक रहे ?

उ. श्री कृष्ण जी विवाह के 12 वर्ष बाद तक ब्रह्मचर्य पूर्वक रहे।

प्र. 10. सत्य और असत्य के निर्णय हेतु परीक्षा के पाँच प्रकार कौन से हैं ?

उ. 1. प्रत्यक्ष आदि आठ प्रमाण 2. ईश्वर और वेद 3. सृष्टिक्रम 4. आप्तों का व्यवहार 5. अपनी आत्मा की पवित्रता

प्र. 11. महापुरुषों के समान चरित्रवान कैसे बना जा सकता है ?

उ. चरित्रवान बनने के लिये सबसे पहले अपने जीवन का कोई महान लक्ष्य बनाना चाहिये और अपनी संगति को अच्छा करना चाहिये। बुरी आदतों वाले साथियों को यथाशीघ्र छोड़कर अच्छी आदतों वाले विद्यार्थियों का संग करना चाहिये। जीवन में किसी महापुरुष व अच्छे व्यक्ति को आदर्श बनाकर आत्मविश्वास पूर्वक संकल्प करके गुटका, तम्बाकू, शराब, मांसाहार, जुआ, अश्लील

साहित्य व चलचित्र आदि को शीघ्र छोड़ देना चाहिये। अपने खान-पान को सात्विक बनाकर, उत्तम पुस्तकों का स्वाध्याय करते हुए स्वयं को अच्छे कार्यों में सदा व्यस्त रखना चाहिये।

प्र. 12. ब्रह्मचर्य का पालन कैसे संभव होता है ?

उ. स्वयं को अच्छे कार्यों पढ़ाई, खेलकूद, व्यक्तित्व निर्माण व सेवा आदि में व्यस्त रखकर प्रतिदिन अच्छी पुस्तकों का स्वाध्याय, व्यायाम, प्राणायाम व ध्यानादि करने व चिंतामुक्त जीवन जीने से स्वतः ब्रह्मचर्य का पालन होने लग जाता है।

प्र. 13. मनुष्य सत्य को छोड़कर असत्य की ओर क्यों झुक जाता है ?

उ. अपने स्वार्थ की सिद्धि, हठ, दुराग्रह और अविद्या आदि दोषों के कारण।

प्र. 14. ब्रह्मचर्य शब्द के कितने अर्थ हैं ?

उ. चार - 1. ईश्वर-चिन्तन 2. वेदाध्ययन 3. विद्योपार्जन और 4. वीर्य-रक्षण

प्र. 15. अभिवादन करने से कितनी चीजें बढ़ती हैं ?

उ. चार- 1. आयु 2. विद्या 3. यश और 4. बल

प्र. 16. ग्यारह प्रामाणिक उपनिषद कौन सी हैं ?

उ. 1. ईश 2. केन 3. कठ 4. प्रश्न 5. मुण्डक 6. माण्डूक्य 7. ऐतरेय 8. तैत्तिरीय 9. छान्दोग्य 10. बृहदारण्यक 11. श्वेताश्वेतर

प्र. 17. विवाह के समय स्त्री-पुरुष की किन चीजों का मिलान करना चाहिये ?

उ. उनके गुण, कर्म, स्वभाव एवं विद्या, विनय, शील, रूप, आयु, बल, कुल तथा शरीर के परिमाण आदि का।

प्र. 18. गर्भवती स्त्री कैसे पदार्थों का सेवन न करे ?

उ. रेचक, रुक्ष, मादक द्रव्य एवं बुद्धि और बल नाशक पदार्थों का सेवन न करे।

प्र. 19. विद्या क्या है ?

उ. अनित्य में अनित्य, नित्य में नित्य, अपवित्र में अपवित्र, पवित्र में

पवित्र, अनात्मा में अनात्मा, आत्मा में आत्मा, दु:ख में दु:ख और सुख में सुख का ज्ञान होना विद्या है।

प्र. 20. अविद्या क्या है ?

उ. अनित्य को नित्य, नित्य को अनित्य, अपवित्र को पवित्र, पवित्र को अपवित्र, दु:ख में सुख, सुख में दु:ख, अनात्मा (जड़) को आत्मा (चेतन) और आत्मा (चेतन) को अनात्मा (जड़) मानना अविद्या है।

प्र. 21. सृष्टि के प्रारम्भ में प्रथम मनुष्य कैसे उत्पन्न हुए ?

उ. सृष्टि के प्रारम्भ में ईश्वर ने अमैथुनी सृष्टि में पृथिवी रूपी गर्भ से हजारों की संख्या में युवा नर-नारियों को उत्पन्न किया पश्चात् मैथुनी सृष्टि प्रारम्भ हुई।

प्र. 22. क्या वेद डार्विन की विकासवाद की परिकल्पना का समर्थन नहीं करते ?

उ. वेद डार्विन के विकासवाद का समर्थन नहीं करते हैं। वह अवैदिक तथा अतार्किक है।

प्र. 23. क्या आप इसमें कोई वेद का प्रमाण दे सकते हैं ?

उ. हाँ, क्यों नहीं। यजुर्वेद (31/8) देखें-तस्मादश्वाऽजायन्त ये के चोभयादत:। गावों ह जज्ञिरे तस्मात्तस्माज्जाताऽअजावय:।। अर्थात् घोड़े आदि दो जबड़ों वाले, बकरी, भेड़ आदि सब पशु परमात्मा ने उत्पन्न किये, अर्थात् विभिन्न योनियाँ सृष्टि के आदि काल से विद्यमान हैं। वेद के अन्य प्रमाणों से भी यह बात स्पष्ट है कि (1) जितने प्राणी हैं वे सब ईश्वर ने बनाये हैं (2) सब योनियाँ एक-दूसरे से निरपेक्ष है, अर्थात् सबकी स्वतंत्र सत्ता है। (3) सभी योनियाँ स्वरूपत: एक-दूसरे से भिन्न हैं और (4) जैसी वे सृष्टि के प्रारम्भ में थीं, अब तक भी वैसी ही बनी हुई हैं।

प्र. 24. क्या वेदों में भौतिक विज्ञान भी है ?

उ. वेदों में भौतिक विज्ञान मूल रुप में प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होता है। उदाहरणार्थ सृष्टि उत्पत्ति के विषय में बहुत ऐसे मंत्र प्राप्त होते है जो आज के आधुनिक वैज्ञानिकों को भी सृष्टि उत्पत्ति से संबंधित पहेलियों को हल करने में उचित दिशा दे सकते हैं। ऋग्वेद के 10 वें मण्डल का 129 वाँ सूक्त जो नासदीय सूक्त के नाम से प्रसिद्ध है, सृष्टि उत्पत्ति विषय को समझने में विशेष उपयोगी है।

पृथिवी गोल है अपने अक्ष पर घूमती हुई सूर्य के चारों ओर

परिक्रमा करती है। इसके लिये यजुर्वेद 3/6 व ऋग्वेद 10/65/6 दर्शनीय हैं। चन्द्रमा पृथिवी की परिक्रमा करते हुए सूर्य और पृथिवी के बीच में आ जाता है। (ऋग्वेद 8/48/13),

समस्त लोक सूर्य के आकर्षण व परस्पर के आकर्षण अनुकर्षण से आबद्ध व स्थिर हैं। (ऋग्वेद 8/12/28, 8/12/29)

चन्द्रमा सूर्य के प्रकाश से प्रकाशित है। (यजु. 23/9)

सृष्टि विद्या से अतिरिक्त अन्य विद्यायें यथा गणित विद्या– अंकगणित, बीजगणित व रेखा गणित सहित (यजु. 18/24,25) (यजु. 23/62)

भूमि, जल और अंतरिक्ष में गमन करने वाले यान/विमान के निर्माण व परिचालन की विधि के लिये (ऋ. 1/116/3,4,5)(ऋ. 1/164/48) आदि।

तार विद्या के लिये(ऋ. 1/119/10)।

चिकित्सा विद्या (यजु.6/22)तथा अथर्ववेद के अनेक मंत्र (अथर्व 11/4/16, 19/38/1, 1/23/1)

वेदों में भौतिक ज्ञान विषय को विस्तारपूर्वक समझने के लिये महर्षि दयानन्द सरस्वती कृत ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका ग्रंथ देखें। जिस ग्रंथ से प्रेरित होकर ही राइट ब्रदर्स से 8 साल पहले सन् 1895 में भारतीय वैदिक वैज्ञानिक श्री पंडित शिवकर बापू जी तलपदे ने मुम्बई के चौपाटी बीच पर 1500 फीट की ऊंचाई तक विमान उड़ाकर दिखाया था। महर्षि दयानन्द जी के इस ग्रंथ से प्रेरित हो उन्होंने महर्षि भारद्वाज कृत विमानशास्त्र और वेदों का गहन अध्ययन किया। वे बाद में आर्यसमाज कांकड़वाड़ी, मुम्बई के सदस्य बने और उन्होनें महर्षि के कई ग्रंथों का मराठी में अनुवाद भी किया।

प्र. 25. क्या हवन/अग्निहोत्र करना विज्ञान युक्त है ?

उ. अवश्य ही यह विज्ञान युक्त है। अग्नि में समर्पित किये गये पदार्थ गोघृत, जड़ी बूटियों का मिश्रण सामग्री आदि अग्नि के तेज से विखण्डित हो अत्यन्त सूक्ष्म होकर वातावरण में फैल कर

पर्यावरण प्रदूषण को दूर करते हैं व सम्पूर्ण वातावरण को सकारात्मक ऊर्जा से आवेशित कर देते हैं जिससे व्यक्ति का मन चिंता-तनाव मुक्त हो शान्त एवं तेजस्वी हो जाता है। शारीरिक स्वास्थ्य उत्तम होता है, रोग प्रतिरोधक क्षमता में भी अत्यंत वृद्धि होती है। वर्तमान में आधुनिक विज्ञान के कई परीक्षणों से यह बात सिद्ध हो चुकी है कि ठीक विधि से उचित अनुपात में घृत सामग्री व समिधा के प्रयोग से अच्छी प्रकार से प्रदीप्त अग्नि में आहुतियाँ देने से SO_2, No_2, RSPM व बैक्टीरियल काउन्ट आदि में न्यूनता आती है व वातावरण सकारात्मक ऊर्जा से आवेशित होता है।

भजन

आदत बुरी सुधार ले, बस हो गया भजन।
मन की तरंग मोड़ ले, बस हो गया भजन।।
आया कहाँ से कौन तू, और जायेगा कहाँ?
इतना ही तू विचार ले, बस हो गया भजन।।
दुनिया तुझे बुरा कहे, तू शेर बन के रह।
वाणी का स्वर सुधार ले, बस हो गया भजन।।
है दोष तेरी दृष्टि में, दुनिया निहारता।
समता का अंजन डाल ले, बस हो गया भजन।।

नववर्ष कब, क्यों और कैसे ?
सृष्टि काल गणना सहित समझें।

आत्मोन्नति केन्द्र, आर्यसमाज

इस सृष्टि में प्रथम मनुष्य पीढ़ी ने जब पहला सूर्योदय देखा वहाँ से मानवीय प्रथम वर्ष प्रारंभ होकर वर्तमान 22 मार्च 2023 तक 1,96,08, 53,123 वर्ष पूर्ण हो चुके हैं। सृष्टि काल गणना की 1 इकाई 'मन्वन्तर' है। 14 मन्वन्तरों में विभक्त इस सृष्टि काल में 6 मन्वन्तर और 7 वें मन्वन्तर की 28वीं चतुर्युगी के कलियुग के 5123 वर्ष समाप्त होकर 5124 वाँ वर्ष प्रारंभ हो गया है।

इस प्रकार इस सृष्टि के प्रथम सूर्योदय से काल गणना प्रारंभ करना ही सम्पूर्ण मानव जाति के लिये एक समान होकर, उन्हें एक सूत्र में बांधने व संगठित करने वाला है। विभिन्न देशों के महापुरुषों के जन्मदिवस या राजाओं के राज्याभिषेक दिवस से प्रारंभ होने वाली कालगणना मनुष्य मात्र के लिए सर्वमान्य नहीं हो सकती है। अतः आईये प्रथम सूर्य दर्शन से प्रारंभ हुई सनातन सृष्टि काल गणना को समझें और उसके आधार पर सृष्टि नववर्ष का स्वागत बसंत ऋतु में मार्च या अप्रैल मास में आने वाली चैत्र शुक्ल प्रतिपदा से करना प्रारंभ करें।

आईये सृष्टिकाल गणना की विभिन्न इकाईयों चार युग, चतुर्युगी, ब्रह्म दिवस, ब्रह्म रात्रि, मन्वन्तर आदि को समझना प्रारंभ करें :-

चार युग व उनके काल –

सतयुग – 17,28,000 वर्ष, त्रेतायुग – 12,96,000 वर्ष, द्वापर युग – 8,64,000 वर्ष, कलियुग – 4,32,000 वर्ष

कलियुग से द्वापर युग दुगने, त्रेता युग तिगुने व सतयुग चार गुने काल के बराबर होता है। इन चारों युगों को मिलाने पर एक चतुर्युगी 43,20,000 वर्ष की होती है।

एक सृष्टि को ब्रह्मदिवस भी कहते हैं उसका काल 1,000 चतुर्युगी अर्थात् 4 अरब 32 करोड़ वर्ष के बराबर होता है। इसी प्रकार से प्रलय जो ब्रह्मरात्रि कहलाता है उसका समय भी 1,000 चतुर्युगी = 4 अरब 32 करोड़ वर्ष होता है।

सृष्टि काल गणना की एक इकाई "मन्वन्तर " भी है। एक मन्वन्तर 71 चर्तुयुगियों के बराबर होता है। इस प्रकार मन्वन्तर की दृष्टि से 1 सृष्टि=1 ब्रह्मदिवस=14 मन्वन्तर +6 चतुर्युगी होती है। 14 मन्वन्तर अर्थात् 14×71 चतुर्युगी= 994 चतुर्युगियाँ। इस प्रकार से भी एक सृष्टि= 1 ब्रह्म दिवस में 14 मन्वन्तर (=994 चतुर्युगी) + 6 चतुर्युगी= कुल 1,000 चतुर्युगियाँ हुई)

इसी प्रकार से 1 प्रलय=1ब्रह्मरात्रि भी 1000 चतुर्युगी की होती है। वर्तमान 22 मार्च 2023 के पश्चात् सृष्टि के 7वें मन्वन्तर की 28 वीं चतुर्युगी के कलियुग का 5124 वाँ वर्ष प्रारंभ हुआ है। अतः व्यतीत हो चुके 6 मन्वन्तर = 71 चतुर्युगी×6 = 1,84,03,20,000 वर्ष। 7 वें मन्वन्तर की व्यतीत हुई 27 चतुर्युगी =43,20,000×27=11,66,40,000 वर्ष

7 वें मन्वन्तर की व्यतीत हुई 28 चतुर्युगी के बीते हुए 3 युग =17,28,000 +12,96,000+ 8,64,000 = 38,88,000 वर्ष वर्तमान (22 मार्च 2023 के पश्चात्) 7वें मन्वन्तर में चल रहा कलियुग वर्ष = 5,124 वाँ इन सब के जोड़ से (22 मार्च 2023 के पश्चात्) प्रारंभ हुआ सृष्टि नवसंवत्सर या सृष्टि नववर्ष 1,96,08,53,124 वाँ वर्ष प्राप्त होता है।

सृष्टि नव-वर्ष प्रत्येक वर्ष चैत्र शुक्ल प्रतिपदा पर बसन्त ऋतु में प्रारम्भ होता है। यही समय प्रत्येक मनुष्य के लिये नव वर्ष के स्वागत करने का है। मत, सम्प्रदाय से ऊपर उठकर प्रत्येक हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई, जैन, बौद्ध आदि मनुष्य मात्र के लिये यही समय नववर्ष को सोल्लास मनाने का होता है क्योंकि यह गणना सृष्टि के प्रथम सूर्योदय से है, जो सभी के लिए समान रूप से मान्य है।

आर्यसमाज एक परिचय

आर्य समाज की स्थापना चैत्र सुदी प्रतिपदा संवत् 1932 (7 अप्रैल सन् 1875 ई.) को महर्षि दयानन्द सरस्वती ने बम्बई में की थी। आर्य समाज के कई महत्वपूर्ण मंतव्य अर्थात् सिद्धान्त हैं- जैसे एकेश्वरवाद, पुनर्जन्म में विश्वास, त्रैतवाद अर्थात् आत्मा, परमात्मा व प्रकृति (मूल कण) इन तीनों को अनादि और नित्य मानना, वेद परमेश्वर की वाणी है, कर्मफल अर्थात् कर्मों का फल अवश्य भोगना पड़ता है, यानि किसी प्रकार पाप क्षमा नहीं होते, गुण-कर्म-स्वभाव के आधार पर वर्ण व्यवस्था, आश्रम व्यवस्था, पंच महायज्ञों को करना और 16 संस्कार। आर्य समाज वैदिक ध्यान/योग की यथार्थ पद्धति को प्रस्तुत करने के साथ-साथ धार्मिक क्षेत्र में व्याप्त कुरीतियों यथा मूर्तिपूजा, तीर्थादि, अवतारवाद, मृतक-श्राद्ध, फलित ज्योतिष, बहुदेवतावाद, भूत-प्रेत योनियों आदि का विरोध करता है। इसी प्रकार सामाजिक क्षेत्र मे व्याप्त सतीप्रथा, अनमेल व बाल-विवाह, छुआछूत और अभक्ष्य पदार्थ आदि कुरीतियों का विरोध करता है। आर्य समाज विधवा विवाह और स्त्री व शूद्रों को भी शिक्षा व समानता के अधिकार का समर्थन करता है। सारे संसार को आर्य बनाओ इस लक्ष्य के आधार पर आर्य समाज शुद्धि आन्दोलन का पक्षधर है।

भोजन मंत्र

अन्नपतेन्नस्य नो देह्यनमीवस्य शुष्मिणः।

प्र प्र दातारं तारिषऽऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुष्पदे।। यजु. 11/83

हे (अन्नपते) अन्न के पालक रक्षक प्रभु! आप (नः) हमारे लिये (अनमीवस्य) रोगों के नाश से सुख को बढ़ाने (शुष्मिणः) बहुत बलकारी (अन्नस्य) अन्न को (प्र प्र देहि) अपनी अपार दया व कृपा से हमें प्रदान कर रहे हैं, यह हम अत्यंत धन्यवाद व कृतज्ञता के भाव से स्वीकार करते हैं (दातारम्) आपके दिये इस अन्न को हम तक पहुंचाने वाले को भी (तारिषः) तृप्त करिये तथा (नः) हमारे (द्विपदे) दो पग वाले मनुष्यादि तथा (चतुष्पदे) चार पगवाले गौ आदि पशु भी आपकी ही कृपा से

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी का जीवन परिचय

महर्षि दयानन्द सरस्वती सत्यार्थप्रकाश ग्रन्थ के लेखक और आर्य समाज के संस्थापक हैं। इनका जन्म गुजरात राज्य के मौरवी रियासत के अन्तर्गत टंकारा नामक ग्राम में फाल्गुन बदी दशमी संवत् 1881 (12 फरवरी 1824) को हुआ। इनके बचपन का नाम मूलशंकर था। इनके पिता करसनलाल तिवारी और माता यशोदाबाई जी थीं। ये औदिच्य ब्राह्मण थे। महर्षि दयानन्द अत्यन्त कुशाग्र बुद्धि बालक थे और 14 वर्ष की अवस्था में ही यजुर्वेद संहिता कण्ठस्थ कर ली थी।

महर्षि दयानन्द सरस्वती जब 14 वर्ष की अवस्था के हुए तो उन्होंने शिवरात्रि का व्रत रखा। रात्रि जागरण के लिए पिताजी के साथ शिव मंदिर में गये। रात्रि को 12 बजते-बजते जब सब भक्त ऊंघ-ऊंघ कर सो चुके थे, तब अकेला बालक मूलशंकर आँखों पर जल के छींटे दे देकर जागता रहा, क्योंकि उसने सुन रखा था कि सोने से व्रत निष्फल होकर शिव के दर्शन नहीं होते। अर्धरात्रि के बाद अचानक कुछ चूहों को शिवपिण्डी पर रखी हुई भोग सामग्री खाते और उस पर मल-मूत्र करते देखा तो उनकी आस्था सदा-सदा के लिए मूर्तिपूजा से हट गई।

जब महर्षि दयानन्द 16 वर्ष के हुए, तब इनकी 14 वर्षीया बहन की विषूचिका के कारण मृत्यु हो गई। उन्होंने पहली बार किसी मनुष्य को मरते देखा था। अतः बहन की मृत्यु से उनके दिल को बहुत धक्का लगा और हृदय में मौत का भय घुस जाने के कारण इनकी आँखों से एक आँसू भी न निकल सका। इस पर इनकी माता सहित अन्य लोगों ने इन्हें पाषाण हृदय तक कह डाला। बहन की मृत्यु के तीन वर्ष बाद इनके प्रिय चाचा की भी विषूचिका से मृत्यु हो गई, तो ये इतने फूट-फूट कर रोये कि आँखे ही सूज गई। इस प्रकार युवावस्था में ही बहन और चाचा की मृत्यु देखकर इनके मन में वैराग्य की भावना प्रबल हो गई। और उन्होंने विवाह न करने का निश्चय कर लिया।

जब 22 वर्ष की अवस्था में इनके माता-पिता ने इनका विवाह पक्का कर दिया और घर में विवाह की तैयारी होने लगी तो वे सोच में पड़ गए और सच्चे शिव को प्राप्त करने तथा मृत्यु को जीतने के लिए घर से निकल गए। रास्ते में एक ब्रह्मचारी से नैष्ठिक ब्रह्मचर्य की दीक्षा लेकर अपना नाम शुद्ध चैतन्य रख लिया। जब वे 24 वर्ष के हुए तो नर्मदा के तट पर स्थित चाणोद कन्याली ग्राम में स्वामी पूर्णानन्द सरस्वती से संन्यास ग्रहण कर लिया और स्वामी दयानन्द सरस्वती बन गए।

महर्षि दयानन्द ने ज्वालानन्दपुरी और शिवानन्द गिरी नामक साधुओं से योग विद्या और उसकी साधन क्रिया सीखी। महर्षि दयानन्द ने इनके प्रति अत्यन्त कृतज्ञता प्रकट की है। सन् 1860 ई. में मथुरा में आकर गुरु विरजानन्द सरस्वती जी के चरणों में बैठकर अष्टाध्यायी, महाभाष्य और वैदिक ग्रन्थों का अध्ययन किया और मार्ग दर्शन प्राप्त किया। विद्या समाप्ति पर गुरु दक्षिणा में अपना सम्पूर्ण जीवन गुरुजी की आज्ञानुसार वेद के प्रचार के लिए समर्पित कर दिया।

गुरुजी से आशीर्वाद ले दयानन्द सरस्वती विद्या के अलौकिक अस्त्र शस्त्रों से सुसज्जित हो भारतीय रंग-मंच पर अवतीर्ण हुए। उन्होंने भारत के नगर-नगर, गाँव-गाँव में घूम-घूम कर प्रचार करना आरम्भ कर दिया। सन् 1867 ई. में हरिद्वार में कुम्भ के मेले में पाखण्ड-खण्डिनी पताका फहराकर, मूर्ति-पूजा, फलित ज्योतिष, मृतक श्राद्ध, अवतारवाद, चमत्कार, जन्मगत जाति-पाति, छुआछूत आदि अंधविश्वासों, पाखण्डों और कुरीतियों को दूर करने और वैदिक सिद्धान्तों को स्थापित करने के अभियान का श्रीगणेश किया। वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार के लिए सन् 1875 ई. में चैत्र शुक्ल प्रतिपदा के दिन बम्बई में आर्य समाज की स्थापना की।

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने धार्मिक, सामाजिक और राजनैतिक आदि सभी क्षेत्रों में क्रांति की। उन्होंने अवैदिक मत-मतान्तरों का खण्डन किया, बाल-विवाह का विरोध और विधवा विवाह का समर्थन किया। ब्रह्मचर्य का उपदेश दिया, संस्कारों की महत्ता जताई, गौ-माता के रक्षक बने और

रेवाड़ी में सबसे पहली गौशाला खोली। अनाथों के लिए अनाथालय और विधवाओं के लिए वनिता आश्रम खोले। अछूतों को गले लगाया, नारी को उसका अधिकार दिलाया और वेदों का हिन्दी में भाष्य कर वेद विषयक भ्रान्तियों को दूर किया।

स्वातंत्र्य संग्राम में महर्षि दयानन्द जी का बड़ा भारी योगदान रहा। वे स्वातंत्र्य संग्राम के पुरोधा और क्रांतिकारियों के जनक कहे जाते हैं। अहिंसात्मक आन्दोलनकारी महात्मा गांधी के गुरु महादेव गोविन्द रानाडे थे और रानाडे महर्षि दयानन्द को अपना गुरु मानते थे। स्वामी श्रद्धानन्द सरस्वती और लाला लाजपतराय तो इनके प्रसिद्ध शिष्य थे। दादाभाई नौरोजी भी महर्षि दयानन्द कृत सत्यार्थ प्रकाश पढ़कर उससे स्वाधीनता की प्रेरणा लेते थे। इसी प्रकार सशस्त्र क्रान्तिकारियों के पितामह श्याम जी कृष्ण वर्मा, महर्षि दयानन्द जी के अमर शिष्य थे। महर्षि दयानन्द जी ने ही उन्हें विदेश भेजा, जहाँ उन्होंने इण्डिया हाउस की स्थापना की। वीर विनायक दामोदर सावरकर अपने को दयानन्द जी का पक्का चेला मानते थे। जब सावरकर अण्डमान कारावास में थे, तब वे कैदियों को सत्यार्थ प्रकाश पढ़ाया करते थे। सावरकर के शिष्य मदनलाल धींगरा थे। भाई परमानन्द आर्य समाज के उपदेशक थे। रामप्रसाद बिस्मिल तो सत्यार्थ प्रकाश से ही जीवन प्राप्त करने वालों में से थे। भगतसिंह के दादा अर्जुन सिंह व पिता किशन सिंह कट्टर आर्य समाजी थे।

महर्षि दयानन्द को मारने के लिए विरोधियों ने उन्हें 17 बार जहर दिया, परन्तु जहर पीकर भी दयानन्द जी अमृत की वर्षा करते रहे। अन्त में सन् 1883 में जोधपुर में नन्हीं जान वेश्या के प्रलोभन में आकर उनके रसोइये जगन्नाथ ने उन्हें दूध में सीसा पीसकर दे दिया। विष देने के बाद जोधपुर में उनकी चिकित्सा शुरू हुई, उससे कोई स्वास्थ्य लाभ न होने पर उन्हें आबू पर्वत ले जाया गया और वहाँ से अजमेर में भिनाय कोठी में लाया गया। विष देने के करीब एक माह बाद दीपावली के दिन सायं 6 बजे अजमेर में ही यह कहते हुए कि 'प्रभो! तूने अच्छी लीला की तेरी इच्छा पूर्ण हो।' अपने प्राण त्यागकर अपनी ज्योति से सबको ज्योतिष्मान् कर गए। उनकी मृत्यु के

शानदार दृश्य को देखकर घोर नास्तिक पण्डित गुरुदत्त विद्यार्थी पक्के आस्तिक हो गये।

महर्षि दयानन्द की मृत्यु पर श्रद्धांजलि देते हुए लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक ने कहा था कि 'ऋषि दयानन्द एक ऐसे जाज्वल्यमान नक्षत्र थे, जो भारतीय आकाश पर अपनी अलौकिक आभा से चमके और गहरी निद्रा में सोये हुए भारत को जागृत किया। महर्षि दयानन्द स्वराज्य के सर्वप्रथम सन्देश वाहक तथा मानवता के उपासक थे। ऐसे महान् संन्यासी महर्षि दयानन्द का अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश हमें सदा प्रेरणा देता रहा है और आगे भी देता रहेगा।'

संक्षेप में महर्षि दयानन्द सरस्वती के बारे में कहा जा सकता है कि 'संसार भर के महापुरुषों में महर्षि दयानन्द की शान निराली है। अन्य महापुरुषों में किसी में एक गुण है तो किसी में दूसरा। कोई प्रभुभक्त है तो विद्वान नहीं, कोई विद्वान है तो योगी नहीं, कोई योगी है तो सुधारक नहीं, कोई सुधारक है तो दिलेर नहीं, कोई दिलेर है तो ब्रह्मचारी नहीं, कोई ब्रह्मचारी है तो वक्ता नहीं, कोई वक्ता है तो लेखक नहीं, कोई लेखक है तो सदाचारी नहीं, कोई सदाचारी है तो परोपकारी नहीं, कोई परोपकारी है तो कर्मठ नहीं, कोई कर्मठ है तो त्यागी नहीं, कोई त्यागी है तो देशभक्त नहीं, कोई देशभक्त है तो वेदभक्त नहीं, कोई वेदभक्त है तो उदार नहीं, कोई उदार है तो शुद्ध आहारी नहीं, कोई शुद्ध आहारी है तो योद्धा नहीं, कोई योद्धा है तो सरल नहीं, कोई सरल है तो सुन्दर नहीं, कोई सुन्दर है तो बलिष्ठ नहीं, कोई बलिष्ठ है तो दयालु नहीं, कोई दयालु है तो संयमी नहीं। परन्तु यदि आप ये सभी गुण एक ही स्थान पर देखना चाहें तो देव दयानन्द को देखो, निष्पक्ष होकर देखो।'

महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश के अतिरिक्त अन्य बहुत से ग्रन्थों की रचना की, जिनमें ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, संस्कारविधि, पंचमहायज्ञविधि, गोकरुणानिधि, व्यवहारभानु आदि पुस्तकें प्रमुख हैं।

सत्यार्थप्रकाश

(प्रा० दयाल आर्य, टंकारा)

सत्यार्थप्रकाश यह क्रांति का अग्रदूत है विचारों की चिंगारी है। कभी न बुझ सके, न कम्पित हो सके ऐसी सदा प्रज्ज्वलित रहने वाली दिव्य ज्वाला है। अज्ञान, अंधकार और अविद्या का तिमिर इससे दूर भागता है।

एक बार सत्यार्थप्रकाश पढ़े हुए व्यक्ति को कोई भ्रम में नहीं डाल सकता। कोई देशी विदेशी सम्प्रदाय या मजहब उसे धोखा नहीं दे सकता – विद्वानों की दोहरी चाल को वह तुरन्त पहचान लेता है। एक सामान्य कोटि का मानव इसे पढ़कर बड़े बड़े धर्माचार्य–पंडित, पोप –पादरी, मुल्ला–मौलवी के वाक्जाल में फँस नहीं सकता,मत मतान्तरों के घेरे में कैद नहीं हो सकता। इसलिए आजादी के विजयी योद्धा स्वातंत्र्य वीर विनायक दामोदर सावरकर कहते हैं कि –

'सत्यार्थप्रकाश की विद्यमानता में कोई धर्मावलम्बी अपने मत की बड़ाई मार नहीं सकता। हिन्दु जाति की ठण्डी नसों में गरम लहु का संचार करने हारा यह ग्रन्थ अमर रहे यही मेरी कामना है'।

सत्यार्थप्रकाश सामान्य मनुष्य को देवत्व की ओर ले जाने वाला प्रकाश–स्तम्भ है। इसलिए ही तो लाला लाजपतराय कहते हैं –

गुरुदेव दयानन्द रचित सत्यार्थप्रकाश मेरे जीवन में प्रकाश करने वाला 'सूर्य के समान है ।'

इस बात का समर्थन करते हुए डॉ.श्यामाप्रसाद मुखर्जी भी कहते हैं कि – 'युग निर्माण तथा चतुर्मुखी प्रगति की भावना से ओत–प्रोत यह दिव्य ग्रन्थ एक महान प्रकाश स्तम्भ है। '

सत्यार्थप्रकाश ने लाखों करोड़ों भूले भटके हुओं के जीवन का पथ प्रदर्शन किया है,यह बतलाते हुए पादरी सी.एफ.एंड्रयूज कहते हैं – 'मैंने भारत में आकर सच्चे हिन्दु धर्म का परिचय सत्यार्थप्रकाश के स्वाध्याय से प्राप्त किया है। कारण कि मार्ग भूले भटके मनुष्य के लिए यह 'पथ प्रदर्शक 'है।

सत्यार्थप्रकाश पवित्र और प्रेरणाप्रद धर्म पुस्तक है, जीवन-शास्त्र है, शाश्वत तत्व दर्शन है। दार्शनिक ज्ञान का भण्डार है। हजारों वर्षों से होश गवां बैठी, जोशभग्न, निर्जीव बनी मुर्दा हिन्दु जाति में प्राण फूँककर नवजीवन प्रदान करने वाली संजीवनी है। भ्रम, अंधश्रद्धा, संशय, रूढ़ि, वैर, द्वेष और अंधी मजहबी कट्टरता का उन्माद आदि रोगों से पीड़ित समाज को निरोगी स्वस्थ बनाने हारा यह सिद्धहस्त चिकित्सक है।

धन्य ! युग द्रष्टा, आचार्यकुल-कमल-दिवाकर दयानन्द ! आपके इस सर्वतोभद्र, सत्यप्रकाशक, मानव निर्माण के शिक्षाग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश को !!!

इसलिए तो मुनिवर गुरुदत्त विद्यार्थी अपना अंतरतम हृदय खोलकर कहते हैं कि -

यदि सत्यार्थप्रकाश की एक प्रति का मूल्य हजारों रुपये भी होता तब भी मैं अपनी सम्पूर्ण संपत्ति को बेचकर इसे खरीदता। कारण कि मैं जहाँ-जहाँ भी इसमें दृष्टि डालता हूँ वहाँ-वहाँ इसमें ऐसी विद्या भरी पड़ी है कि मानव मात्र की बुद्धि को चकित कर दे। मैंने इस ग्रन्थ को अठारह बार विचारपूर्वक पढ़ा है और प्रत्येक समय मुझे नयी नयी बातें मिली हैं।

इस अनुपम ग्रन्थ की रचना का आधार महर्षि दयानन्द का विशाल शास्त्र ज्ञान ,व्यापक अनुभव और दिव्य प्रतिभा है। कार्ल मार्क्स ने इंग्लैंड में विशाल ग्रंथालय का उपयोग करके 34 (चौंतीस) वर्षों में 'केपिटल' ग्रन्थ को पूरा किया। परन्तु महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश जैसे अद्भुत ग्रन्थ की रचना कितने काल में की, यह जानते हो ?

साढ़े तीन मास में।

हाँ मात्र साढ़े तीन मास (महीने) में मौखिक बोलकर महान ग्रन्थ की रचना की। धन्य हैं महर्षि दयानन्द ! धन्य हैं !

किसी ग्रन्थ के ईश्वरीय ज्ञान होने की अनिवार्य कसौटियाँ/मानदंड व शर्तें

(आत्मोन्नति केन्द्र, आर्यसमाज)

सत्य मार्ग के पथिक के मनमंदिर में उत्पन्न संशय उसे दिग्भ्रमित कर लक्ष्य से विमुख कर सकते हैं। अत: यह अत्यन्त आवश्यक है कि जिज्ञासु व्यक्ति सुलझी हुई सोच व प्रमाणों के आधार पर ही जीवन में उचित निर्णय लें।

न्यायदर्शनकार महर्षि गौतम जी के अनुसार मन में उत्पन्न संशय तत्त्वज्ञान की प्राप्ति में सहायक हैं। तथापि गीता में योगीराज श्रीकृष्ण जी का वचन "संशयात्मा विनश्यति" भी अपने आप में पूर्ण सार्थक है।

किस ग्रन्थ व ज्ञान को ईश्वरीय मानें, यह यक्ष प्रश्न भी अध्यात्म मार्ग के पथिक के हृदय में कभी न कभी तो उपस्थित होता ही है। आइये इस विषय पर एक सुलझी हुई सोच व अनुमान प्रमाण के आधार पर निर्धारित की गयी निम्नलिखित कसौटियों से सत्यनिर्णय तक पहुँचने का प्रयास करें :-

1. ईश्वरीय ज्ञान किसी वर्ग विशेष के लिए नहीं अपितु मनुष्य मात्र के लिए रंग-रूप, जाति आदि के भेदभाव के बिना ईश्वर द्वारा दिया जायेगा क्योंकि ईश्वर मनुष्य मात्र के माता-पिता, हितैषी व न्यायकारी है।

2. ईश्वरीय ज्ञान सृष्टि के प्रारम्भ में प्रथम मनुष्य पीढ़ी में ही दिया जायेगा, जिससे पीढ़ी दर पीढ़ी ईश्वरीय ज्ञान प्रवाहित होता हुआ मनुष्य मात्र के लिए उपलब्ध हो सके। ईश्वरीय ज्ञान सृष्टि के प्रारम्भ में ही दिया जायेगा, मध्य में नहीं। क्योंकि मध्य में दिए जाने पर वह मनुष्य मात्र के लिए उपलब्ध नहीं हो सकेगा। उस ज्ञान के कभी मध्य में आने से पूर्व की मनुष्य पीढ़ियां ईश्वरीय ज्ञान से वंचित ही रहेंगी

और ईश्वर पक्षपाती सिद्ध होंगे।

3. ईश्वरीय ज्ञान सृष्टि के प्रारम्भ में प्रथम मनुष्य पीढ़ी में आना सिद्ध होने से यह स्पष्ट है कि ईश्वरीय ग्रन्थ/पुस्तक में किसी भी प्रकार का मनुष्यों व किसी देश का इतिहास नहीं होगा।

4. ईश्वरीय ज्ञान सबसे प्रारम्भ में जिस भाषा में आयेगा, वह भाषा अन्य सभी भाषाओं की मातृभाषा सिद्ध होगी।

5. ईश्वरीय ज्ञान मनुष्य को सर्वांगीण रूप से विकसित करने वाला होने से आध्यात्मिक व भौतिक सभी प्रकार की विद्याओं का स्रोत होगा। अतः ईश्वरीय ग्रन्थ/पुस्तक में सभी प्रकार का भौतिक विज्ञान (साइंस) भी मूल रूप में अवश्य विद्यमान होगा।

6. चूँकि ईश्वर ही सृष्टि के रचयिता व ईश्वरीय ज्ञान के देने वाले हैं, अतः सृष्टि जैसी है उसका वैसा ही विवरण ईश्वरीय ग्रन्थ में होगा, विपरीत नहीं।

7. ईश्वरीय ग्रन्थ मनुष्यों को एकमात्र सच्चे धर्म मनुष्यता/मानवता का ही उपदेश देने वाला होगा। वह मनुष्यों को श्रेष्ठ मनुष्य बनने की प्रेरणा देने वाला होगा न कि उनको विभिन्न वर्गों हिंदु, मुस्लिम, सिख, ईसाई आदि में बाँटने वाला होगा।

8. ईश्वरीय ग्रन्थ की सभी बातें तर्क की कसौटी में भी सत्य ही प्रमाणित होंगी।

9. ईश्वरीय ज्ञान धर्म व अध्यात्म के नाम पर प्रचलित सभी गलत परम्पराओं, मान्यताओं व अन्धविश्वासों का निराकरण करने वाला तथा युक्तियुक्त सिद्धान्तों व नियमों का प्रतिपादन करने वाला होगा।

10. तीनों नित्य, अनादि तत्वों ईश्वर, जीव व प्रकृति का यथावत सत्य-

सत्य विवरण ईश्वरीय ग्रन्थ में होगा।

11. पूर्ण परमात्मा का ज्ञान होने से ईश्वरीय ज्ञान मनुष्य की सर्वांगीण उन्नति एवं जीवन लक्ष्य प्राप्ति हेतु सभी प्रकार से सक्षम व पूर्ण होगा। अत: उसमें किसी भी प्रकार के संशोधन, परिवर्तन व परिवर्धन की आवश्यकता नहीं होगी।

उपर्युक्त इन ग्यारह कसौटियों पर वेद, कुरान, बाइबिल, रामायण, गीता, महाभारत व पुराण आदि को कस कर देखने से आप सरलता से समझ सकेंगे कि ईश्वरीय ज्ञान केवल वेद ही है। कुरान लगभग 1400 वर्ष, बाइबिल लगभग 2100 वर्ष, गीता लगभग 5000 वर्ष और रामायण त्रेतायुग के अंत में लगभग 9 लाख वर्ष पुराना है। जबकि चार वेदों ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद व अथर्ववेद का ज्ञान परमात्मा ने सृष्टि के प्रारम्भ में अग्नि, वायु, आदित्य व अङ्गिरा नामक ऋषियों के हृदयों में दिया। इन चार ऋषियों से आगे ब्रह्मा ऋषि व अन्य ऋषियों तक फैलते हुए यह ज्ञान मनुष्य मात्र तक पहुँचा। वेदों में किसी मनुष्य व देश का इतिहास न होना तथा वेद की भाषा वैदिक संस्कृत का अन्य सभी भाषाओं की मातृभाषा सिद्ध होना वेदों के सृष्टि के प्रारम्भ में आने को विशेष रूप से सिद्ध करता है।

आप वेदों को पढ़ने व समझने की विशेष योग्यता बनायें क्योंकि ईश्वरीय होने से वेदों का ज्ञान विशुद्ध, प्रामाणिक व भ्रान्तिरहित है। ऐसा कहने में यह तात्पर्य कदापि नहीं है कि आप अन्य ग्रंथों को न पढ़ें। आप अन्य ग्रंथों से भी अच्छी बातों का ग्रहण करें, परन्तु वेदों के ईश्वरीय ज्ञान होने के कारण उनमें ही अधिक परिश्रम करने का प्रयास करें, यही अभिप्राय है। वेदों को समझने के लिये प्रथम महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के दो ग्रंथों ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका व सत्यार्थप्रकाश को अच्छी प्रकार से पढ़ना-पढ़ाना आप के लिए विशेष सहायक होगा। आइये, लौट चलें वेदों की ओर......

पुनर्जन्म, कर्म चक्र व कर्म विषयक महत्वपूर्ण प्रश्न

आत्मोन्नति केन्द्र, आर्यसमाज

क्या मृत्यु के बाद दूसरा जन्म होता है ? क्या हम नये शरीर में जन्म लेंगे ? क्या वास्तव में पुनर्जन्म होता है ? यदि पुर्नजन्म होता है तो मनुष्य को अपने पिछले जन्म और मृत्यु का स्मरण क्यों नहीं रहता ? यदि आत्मा अपने पिछले जन्म के कर्मों को नहीं जानती कि उसे दण्ड किसलिये मिल रहा है तो वह अपना सुधार कैसे कर सकती है ? आदि अनेक प्रकार के प्रश्न मनुष्य मस्तिष्क में उत्पन्न होते रहते हैं।

यदि वास्तविकता को समझने का प्रयास करें तो हम समझ सकते हैं कि हम आत्मा का ज्ञान अत्यन्त सीमित है। पिछले जन्म की स्मृति और अनुभवों को छोड़ भी दें, हमें तो वर्तमान जन्म की कई घटनाओं की स्मृति नहीं रहती। जैसे इस जन्म के लिए गर्भ में आना, गर्भ में शरीर का बनना और वृद्धि को प्राप्त करना। तीन से पांच वर्ष की आयु से पूर्व होने वाली अनेक घटनायें जो हमें स्मरण नहीं रहती। इसी प्रकार 10 वर्ष पहले सोमवार को क्या खाया था, कौन से कपड़े पहने थे, मन में क्या सोच रहे थे, किन-2 लोगों को देखा था, किसे स्मरण है ? जब इसी जन्म की घटनायें ही हमें याद नहीं रहती, तो पिछले जन्म की घटनाओं को भूल जाने में आश्चर्य की क्या बात है ? अतः इस आधार पर पिछला जन्म न मानना निराधार है।

वास्तव में तो पिछले जन्म को भूल जाना ही हमारे लिए सुखकर है। अन्यथा पिछले जन्म की दुःखद और पीड़ादायक यादें इस वर्त्तमान जीवन को और भी दुःखद बना देगी। हम जीवन में सब कुछ प्रत्यक्ष प्रमाण से ही नहीं जानते अपितु अनुमान प्रमाण व शब्द प्रमाण से भी जानते हैं। जन्म के साथ बच्चों के जीवन में दिखने वाली असमानतायें यथा किसी का गरीब परिवार में पैदा होना, किसी का अमीर परिवार में, किसी का स्वस्थ बलवान होना, किसी का अत्यंत निर्बल व रोगी होना आदि-आदि। इसी प्रकार बाल्यकाल से ही भिन्न-भिन्न विषयों में रुचि, झुकाव व योग्यता आदि सब कुछ पिछले जन्म की ओर ही संकेत करती हैं। ये भिन्नतायें आकस्मिक बिना कारण के ही तो नहीं हैं। ये सब हमें पिछले जन्म के कर्मों

को अनुमान लगवाते हुए पुनर्जन्म को अच्छे से समझाती हैं।

यह जन्म-मृत्यु का प्रवाह कर्म चक्र के कारण है, यह कर्मचक्र कैसे चल रहा है। पुण्यकर्मों से सुख और पाप कर्मों से दु:ख मिलता है। व्यक्ति सुख में राग और दु:ख में द्वेष उत्पन्न कर लेता है। पुनः इन राग-द्वेष के कारण फिर से सकाम पुण्य और पाप कर्मों को करता है।पुनः उनसे सुख-दु:ख और पुनः सुख-दु:ख में राग-द्वेष और पुनः राग-द्वेष से पुनः सकाम पाप-पुण्य का कर्मचक्र गति प्राप्त करता जाता है। इस प्रकार से व्यक्ति आगे से आगे कर्मबंधन में बँधता ही जाता है।

इस चक्र से बाहर आने का समाधान यही है कि व्यक्ति जीवन की अनुकूलता-प्रतिकूलताओं में राग-द्वेष रहित हो। तटस्थ सम रहने के अभ्यास को अच्छे से साधे, स्वयं को व परमात्मा को जाने तभी कर्त्तव्यभाव से कर्मों को सांसारिक फलेच्छा से रहित हो निष्काम भाव से कर सकेगा।

कर्म विषय को अच्छे से समझने के लिये व्यक्ति को कर्म की परिभाषा, कर्म के विभिन्न प्रकार-सकाम कर्म, निष्काम कर्म, पुण्य-पाप-मिश्रित कर्म, क्रियमाण कर्म, संचित कर्म, प्रारब्ध कर्म, कृत-कारित व अनुमोदित कर्मों को भी भलीभाँति समझ लेना चाहिये।

कक्षा के प्रारम्भ में बोला जाने वाला मंत्र

ओं सहनाववतु सह नौ भुनक्तु सह वीर्यं करवावहै।

तेजस्विनावधीतमस्तु मा विद्विषावहै ।।

(ओ३म्) हे सर्वान्तर्यामी सर्वरक्षक परमेश्वर! (सहनाववतु) आप हम पढ़ने और पढ़ाने वालों की रक्षा कर रहे हैं व कीजिये (सहनौभुनक्तु) आप हम दोनों का पालन पोषण कर रहे हैं व कीजिये (सह वीर्यं करवावहै) हम दोनों पढ़ने और पढ़ाने वाले सदा एक दूसरे का उत्साह बढ़ाते रहें (तेजस्विनावधीतमस्तु) हमारा पढ़ा और पढ़ाया हुआ हमारे जीवन, आचरण में आकर तेजस्वी हो, दूर-2 तक फैलने वाला हो (मा विद्विषावहै) हम परस्पर सदा प्रेम से पढ़ें पढ़ायें, कभी एक दूसरे से द्वेष न करें।

कर्म से संबंधित कुछ महत्त्वपूर्ण प्रश्न

प्र. 01. हमारे जीवन में जो भी सुख और दु:ख आते हैं क्या वे सब हमारे पहले किये गये कर्मों के फल हैं ?

उ. जीवन में आने वाले सभी सुख-दु:ख हमारे पूर्व कर्मों के ही फल हों ऐसा वैदिक सिद्धांत नहीं हैं। उदाहरणार्थ सोचिये शराब पीकर गाड़ी चलाने वाला कोई चालक, किसी ठीक रास्ते जाते हुए आपके किसी अपने व्यक्ति को पीछे से आकर टक्कर मार कर घायल कर दे तो आप क्या करेंगे ? सामाजिक न्याय व्यवस्था क्या करेगी ? सभी उस कर्त्तव्यविहीन चालक को दण्डित करना चाहेंगे।

इस प्रकार से जीवन में आने वाले दुखों का यथा चोर चोरी कर गया, किसी का बलात्कार हो गया, दूसरे के कारण व्यक्ति दुर्घटना ग्रस्त हो गया आदि। इनका हमारे पूर्व कर्मों से कुछ लेना -देना नहीं है। ये सब अन्याय की श्रेणी में हैं।

यदि सब कुछ हमारे कर्मों का फल है तो सब न्याय है। फिर चोर को, बलात्कारी को दण्डित करने की क्या आवश्यकता है। यह ध्यान रखने योग्य बात है कि ईश्वर कभी भी किसी को गलत प्रेरणा देकर हमारा कर्मफल देने में निमित्त नहीं बनाते हैं। अपितु व्यक्ति अपनी स्वतंत्रता का दुरुपयोग करके गलत कर्म रूप पाप कर्म करता है जिसका परिणाम व प्रभाव दूसरों को भोगना पड़ता है। यही अन्याय कहलाता है। ईश्वरीय व्यवस्थानुसार किये गये पाप कर्म का फल अवश्य मिलेगा और जिस व्यक्ति की अन्यायपूर्वक हानि हुई है, उसकी क्षति पूर्ति परमात्मा अवश्य करेंगे।

प्र. 02. क्या ईश्वर पापों को क्षमा नहीं कर देंगे ?

उ. ईश्वर न्यायकारी हैं, अत: किये गये पापों को क्षमा कभी नहीं करते हैं। यदि पापों को क्षमा कर दें तो व्यक्ति की पाप करने की प्रवृत्ति नष्ट नहीं हो सकेगी। अत: दयालु परमेश्वर हित की भावना से पाप का दण्ड अवश्य देते हैं। वैदिक सिद्धांत यही है कि "अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्" अर्थात् किये हुये अच्छे-बुरे कर्मों का फल देर-सबेर अवश्य प्राप्त होता है।

प्र. 03. क्या अच्छे कर्मों को करने से पाप कर्म नहीं कट जायेंगे ?

उ. अच्छे कर्मों को करने से पाप कर्म नहीं कटते हैं, अपितु उन्हें करते रहने की प्रवृत्ति दृढ़ होती है, जिससे भावी पाप कर्मों की ओर व्यक्ति की प्रवृत्ति क्षीण होती है। परन्तु किये हुए पाप कर्म अच्छे कर्मों से नहीं कटते हैं। उनका फल तो भोगना ही पड़ता है।

प्र. 04. यदि अच्छे कर्मों से बुरे कर्मों का कटना, माइनस होना मान लें तो क्या सैद्धांतिक हानि हो जायेगी ?

उ. बहुत सारी सैद्धांतिक हानियाँ हो जायेंगी। एक तो यह समझ लें कि यदि कर्मों का आपस में एक-दूसरे से प्लस-माइनस होना मानेंगे तो फिर हमारे कर्म खाते (अकाउण्ट) में एक ही प्रकार के कर्म बचेंगे या तो पुण्य कर्म या पाप कर्म। उदाहरण के लिये मान लीजिये किसी के 100 पुण्य कर्म हैं और 40 पाप कर्म तो प्लस-माइनस होने पर 60 पुण्य कर्म ही शेष रहेंगे। या इसके विपरीत उदाहरण लें कि 100 पाप कर्म व 40 पुण्य कर्म हैं तो प्लस-माइनस होकर 60 पाप कर्म ही शेष बचेंगे। दोनों ही उदाहरणों से स्पष्ट है कि ऐसा मानने पर एक प्रकार के ही कर्म शेष बचेंगे। यदि ऐसा ठीक होता तो जीवन में या तो सुख ही सुख होगा या दु:ख ही दु:ख होगा। परंतु किसी भी मनुष्य, पशु आदि योनि में ऐसा देखने को नहीं मिलता कि जिसमें केवल सुख ही सुख हो या दु:ख ही दु:ख । अत: प्रत्यक्ष प्रमाण से सुख-दु:ख दोनों का मिलना पुण्य-पाप दोनों के सह अस्तित्व को सिद्ध करता है उनकी प्लस-माइनस होने की मान्यता को नहीं।

प्र. 05. जो व्यक्ति सुधर रहा है, शुद्ध पवित्र हो रहा है, क्या उसके पापों को भी ईश्वर क्षमा नहीं करेंगे ?

उ० नहीं, उसके पापों को भी ईश्वर क्षमा नहीं करेंगे। अपितु सुधार की ओर अग्रसर व्यक्ति तो स्वयं ही इच्छा करेगा कि उससे जो जाने-अनजाने में दूसरों की हानि हुई है उसके लिये वह दण्ड प्रसन्नतापूर्वक ग्रहण करे। जिससे उसकी और आंतरिक शुद्धि हो सके व समाज में अन्यों को भी गलत न करने की शिक्षा व प्रेरणा मिले। पूर्ण शुद्धता तो दण्ड को भी प्रसन्नतापूर्वक शान्त भाव से सहन करने से ही आती है, अत: ईश्वरीय व्यवस्थानुसार पाप क्षमा नहीं होंगे।

हमारी वाणी कैसी हो

आत्मोन्नति केन्द्र, आर्यसमाज

1. हमारी वाणी प्रेम, अपनत्व व सहानुभूति से परिपूर्ण हो तथा वाणी मधुरता, विनम्रता व मृदुता से युक्त हो।
2. हम सदा ज्ञानपूर्वक सत्य ही बोलें, असत्य व कटु न बोलें।
3. हमारी वाणी में सरलता, सहजता और निश्छलता हो।
4. हमारी वाणी में निरभिमानता और अन्यों के प्रति सम्मान और आदर का भाव हो।
5. हमारी वाणी सदा प्रोत्साहन, धैर्य व दिलासा देने वाली हो, किसी का हृदय भेदने व उसे हीन दिखाने वाली न हो।
6. हम आत्मश्लाघा अर्थात् स्वयं ही अपनी प्रशंसा करने के दोष से युक्त न हों।
7. हमारी भाषा व बोलना स्पष्ट बोध कराने वाला हो। अस्पष्ट, संशय व भ्रांति उत्पादक न हो।
8. हमारी भाषा दोषारोपण व उलाहना देने वाली न हो।
9. हमारी वाणी आदेशात्मक, अपमानजनक व निरर्थक खण्डन करने वाली न हो।
10. हम अनावश्यक, बिना अधिकार व बिना परीक्षण के न बोलें।
11. हम अति तीव्र व धैर्यहीन भाषा न बोलें तथा दूसरे की बात को अनावश्यक रूप से बीच में न काटें।
12. हम ईश्वर की महत्वपूर्ण देन इस वाणी को निन्दा, चुगली में व व्यर्थ बोलकर दूषित न करें।
13. हमारी वाणी परोपकारक, हृदय में शान्ति, करुणा, प्रेम व तत्व ज्ञान का संचार करने वाली हो।
14. हम अपनी बात उचित समय पर प्रसंगानुसार युक्तियुक्त व शांतिपूर्ण रीति से, प्रभावशाली रूप में रखने के सामर्थ्य वाले हों।

15. हमारी वाणी प्राणी मात्र के लिये हितकर हो, अहितकर नहीं।

16. हममें अन्यों को सरलता व शांतिपूर्वक समझा सकने तथा सत्य को स्वीकार करा सकने की योग्यता विशेष हो। हमारी भाषा सदा शास्त्रार्थ वाली न हो।

17. हमारी वाणी उपकारक के प्रति कृतज्ञता के भाव से युक्त हो।

18. हम प्रसंग से असंबंध न बोलें तथा सभा में सबको यथासंभव समझ आ सकने योग्य शुद्ध उच्चारण युक्त भाषा बोलें।

19. हम अपने अधिकारानुसार ही इच्छुक व्यक्ति को सार्थक परामर्श देने की योग्यता वाले हों। बिना योग्यता व अधिकार के निरर्थक परामर्श देने की आदत वाले न हों।

20. हमारी वाणी वदतोव्याघात दोष अर्थात् अपनी बात स्वयं ही काट लेने के दोष से मुक्त हो।

21. हमारी भाषा अतिश्योक्तिपूर्ण (बढ़ाचढ़ाकर बोले जाने वाली) व न्यूनोक्तिपूर्ण (गुणों को घटाकर बोले जाने वाली) न हो।

22. हम सदा दूसरों के दोष व न्यूनताओं को दिखाने वाली तथा अन्यों से तुलना करने वाली भाषा न बोलें अपितु दूसरे के गुणों को प्रकट करने वाली प्रोत्साहनपूर्ण भाषा बोलें।

23. हम इस बात को अच्छे से समझें कि हमारा लक्ष्य तर्क मात्र से किसी बात को सिद्ध करने से अधिक अपनी वाणी व व्यवहार से अन्य के हृदय को स्पर्श कर उसे प्रेम व तर्क से सत्य के प्रति सहमत करा लेना है।

24. अति सर्वत्र वर्जयेत्। हम निकट संबधी के साथ भी अत्यन्त हास्यात्मक व तीव्र व्यंग्यात्मक वाणी न बोलें।

25. हमें स्मरण रहे कि हमारी वाणी व हमारा व्यवहार ही संबंधों को मुख्यरुप से जोड़ने व तोड़ने वाला होता है। अत: हम वाणी व व्यवहार को अत्यन्त विचारपूर्वक सोच–समझकर बोलें व करें।

इण्टरनेशनल वेजीटेरियन एसोसिएशन

हे सुख की इच्छा करने वाले प्रिय मित्र !
आप जीवन में जो बाँटेंगे वही जीवन में वापिस पायेंगे।
अतः सुख पाने के लिए सुख ही बाँटिये जीव हत्या कर दु:ख नहीं।
स्वस्थ शरीर और स्वस्थ मन के लिए स्वास्थ्यवर्धक शाकाहार अपनाइये और सुखी बनिये

सभी प्राणी मेरे मित्र हैं।
इसलिये मैं अपने मित्रों को खाकर कभी अपना पेट नहीं भरता।

कृपया सोचिये एवं उत्तर देने का प्रयास कीजिये-

1. जब आप मृत प्राणियों को सड़क पर मरा हुआ देखते हैं तो क्या आप उन्हें खाने के लिये उत्साहित होते हैं ?
2. क्या एक मरे हुए पक्षी को देखकर आपके मुँह में पानी आता है।
3. क्या आप पानी घूँट-घूँट भरकर पीने की जगह जीभ से चाट-चाटकर पीते हैं ?
4. क्या आप अपने भोजन को बिना चबाये ही सीधे निगलकर पचा लेते हैं ?
5. क्या आपको पसीना शरीर के रोम छिद्रों से न आकर आपकी जीभ के माध्यम से आता है ?

प्रिय मित्र ! यदि आपने इन सवालों का जवाब 'नहीं' के रूप में दिया है तो आपको बधाई, आप पसंद करें अथवा न करें, आप शरीर संरचना की दृष्टि से एक शाकाहारी हैं, मांसाहारी नहीं।

क्या आपने कभी सोचा ?

क्यों जंगल में रहने वाले मांसाहारी प्राणी कभी हृदय रोग, कैंसर, मधुमेह, ब्रेनस्ट्रोक और मोटापे जैसी बीमारियों से पीड़ित नहीं होते और माँस खाने वाले मनुष्य तेजी से इन बीमारियों का शिकार होते जा रहे हैं ? क्यों कई मेडिकल अनुसंधान मांसाहार को हमारे लिये घातक बता रहे हैं ?

क्योंकि मनुष्यों में अधिकांश बीमारियाँ माँसाहार में पाये जाने वाले सैच्यूरेटेड फैट और हानिकारक कॉलेस्ट्रॉल से हो रही हैं।

यह सर्वविदित सत्य है कि मांस अक्सर जानलेवा खतरनाक बैक्टीरिया जैसे कि ई कोलि, लिस्टीरिया आदि से शीघ्र संक्रमित और दूषित हो जाता है। और ये कई बैक्टीरिया मांस को पकाने पर भी नष्ट नहीं होते तथा हमारे अमाशय में विद्यमान एसिड भी मांसाहारी प्राणियों के आमाशय में विद्यमान एसिड की अपेक्षा लगभग 20 गुना कम होने के कारण इन्हें मारने में समर्थ नहीं होता है।

मांस में क्या है ?

(क) मांस में सब्जियों की तुलना में लगभग तेरह गुना ज्यादा कीटनाशक पाये जाते हैं। अमेरिका जैसे देशों में 80% एण्टीबायोटिक्स का प्रयोग पशुओं पर किया जाता है।

(ख) जब जानवरों का वध किया जाता है तब भय व क्रोध के एन्जाइम्स उनकी ग्रन्थियों व अंगों से निकलकर उनके शरीर के सैल्स में भर जाते हैं।

(ग) और इसके साथ यह भी जान लें कि मांसाहारी भोजन फाइबर से रहित होता है तथा इसमें बहुत अधिक मात्रा में हानिकारक कॉलेस्ट्रॉल व सैच्युरेटेड फैट पाया जाता है।

वर्ल्ड हैल्थ ऑरगनाइजेशन (**WHO**) की रिपोर्ट के अनुसार मांसाहारी भोजन 159 प्रकार की विभिन्न बीमारियों का कारण है। जैसे कि–

– हड्डियों की कमजोरी	– क्षय रोग, टी.बी
– हृदय रोग	– कब्ज
– गुर्दों के रोग	– मोटापा
– रक्तवाहिनियों में जख्म	– गठिया
– एक्जीमा	– हिस्टीरिया, उन्माद
– लकवा	– कैंसर आदि

और बहुत सारे मानसिक रोग जैसे– अत्यधिक क्रोध, अधीरता, बेचैनी, अशांति, चंचलता, कामुकता व आपराधिक मानसिकता आदि।

जरा सोचिये...

अगर आप एक मृत शरीर को छू लेते हैं तब आप स्नान करते हैं, हाथ धोते हैं। मगर जब आप उसे अपने भोजनालय में पकाते हैं, तब उसे खुशी-2 खा लेते हैं। क्या यह बुद्धिमता है ?

सोचिये मांसाहार करके आप अपने शरीर को स्वस्थ बना रहे हैं या अस्वस्थ ?

आप प्रकृति प्रेमी को यह पता होना चाहिये कि-

कार्बनडाईऑक्साइड से भी 21 गुना अधिक तीक्ष्ण मिथेन गैस का सर्वाधिक उत्पादन कत्लखानों के माध्यम से होता है। ये कत्लखाने 100 मिलियन टन से भी ज्यादा मिथेन गैस प्रतिवर्ष पैदा कर पर्यावरण को प्रदूषित कर रहे हैं।

इसलिये शाकाहारी बनना ग्लोबलवार्मिंग की समस्या से निबटने का एक असरदार तरीका है।

और भी जानिए कि-वाटर एजुकेशन फॉउण्डेशन के अनुसार एक पौण्ड मांस के उत्पादन में 2,464 गैलन पानी लगता है। जबकि एक पौण्ड गेहूँ के उत्पादन में मात्र 25 गैलन पानी की खपत होती है।

क्या यह तर्कसंगत व न्यायोचित है ?

एक ओर पशुओं को 40 मिलियन टन खाना प्रतिवर्ष दिया जाता है, जिससे अमीर लोग उन पशुओं का मांस खा सकें। इसके विपरीत अन्न की कमी के कारण गरीब देशों की लगभग 50 मिलियन आबादी प्रतिवर्ष भुखमरी का शिकार होती है। अगर अमीर देशों के लोग मांसाहारी भोजन खाना बंद कर दें तो दुनिया से भुखमरी का संकट समाप्त किया जा सकता है।

क्या आप जानते हैं ?

सालाना 5 मिलियन बच्चों की मौत भुखमरी के कारण हो जाती है। जिसका तात्पर्य है हर 10 सेकेण्ड में एक बच्चे की मौत! बावजूद इसके अमेरिका में 80% खाद्यान्न पशुओं को उनका मांस प्राप्त करने के लिये खिला दिया जाता है। जबकि खाद्यान्न की यह मात्रा पूरे विश्व को 5 बार शाकाहारी भोजन खिलाने में समर्थ है।

अब यह आपकी इच्छा पर निर्भर करता है कि आप पशुओं को उनका मांस प्राप्त करने के लिये खिलाकर मारना चाहते हैं या अपने इन मनुष्य भाई-बहनों को शाकाहारी होकर जीवन देना चाहते हैं।

सोचिये –सोचिये –सोचिये.....

आप एक करुणामय, बुद्धिमान व अच्छे इंसान हैं। कृपया प्राणियों पर दया करिये। आप महसूस कर सकते हैं वध के समय प्राणी की पीड़ा को। आप जानते हैं डिमाण्ड और सप्लाई के नियम को। आप समझ सकते हैं कि प्राणी के वध का मुख्य कारण कसाई है या खाने वाला मांसाहारी।

अब आप आहार से संबंधित बहुत कुछ सत्य तथ्यों को समझ गये हैं। कृपया सोचिये और अपने व अन्यों के सुख के लिये उचित निर्णय लीजिये।

संतुलित शकाहार लाता है जीवन में सुख की बहार

शाकाहारी बनिए, यदि...

- आप अपने स्वास्थ्य के लिये जागरुक हैं।
- आप आन्तरिक शान्ति प्राप्त करना चाहते हैं।
- आपको प्रकृति, पर्यावरण व प्राणियों से प्रेम है।
- आप इस धरती को सबके जीने के लिये एक बेहतर जगह बनाना चाहते हैं।
- आपका हृदय करुणामय है।
- आप कर्म के सिद्धान्त '**जैसी करनी वैसी भरनी**' को जानते हैं
- आप प्रभु की विशेष कृपा व आशीर्वाद पाना चाहते हैं।

आपका बहुत–बहुत 'धन्यवाद' कि आपने अपना अनमोल समय इस पत्रक को पढ़ने के लिये दिया।

कृपया अपनी आहार से संबंधित इच्छाओं व पसंदों को विशाल हृदय व जागरुक मन के साथ पुनर्विचारें व सत्य की राह पर आगे बढ़ जायें।

शाकाहार के प्रचार–प्रसार हेतु–

आप हमसे **www.ivaglobe.com** पर जुड़ सकते हैं और हमारे फेसबुक पेज **iva-international vegetarian association** को **LIKE** कर अपनी मित्र मंडली में शाकाहार का प्रचार कर सकते हैं।

- भोजन करना एक आवश्यकता है परन्तु इसे बुद्धिमत्ता पूर्वक करना एक कला है।
- जंक फूड व जेनिटकली मॉडिफाइड फूड का सेवन हानिकारक है।
- अपने शरीर का ध्यान रखिये। वास्तव में यह ही वह स्थान है जहाँ आप निवास करते हैं।
- प्रत्येक मनुष्य अपने उत्तम स्वास्थ्य व रोगमय जीवन का स्वयं ही निर्माता है।
- धन्य है आर्यावर्त्त देशवासी आर्य लोगों को कि जिन्होंने ईश्वर के सृष्टिक्रम के अनुसार परोपकार ही में अपना तन, मन, धन लगाया और लगाते हैं।

प्रातः कालीन मंत्र

प्रातरग्निं प्रातरिन्द्रं हवामहे प्रातर्मित्रावरुणा प्रातरश्विना।

प्रातर्भगं पूषणं ब्रह्मणस्पतिं प्रातः सोममुत रुद्रं हुवेम।।

(प्रातः) प्रातः काल की पावन बेला में (अग्निं) हे मार्गदर्शक, अज्ञान अंधकार को दूर कर राह दिखाने वाले प्रभु (इन्द्रं) परमैश्वर्यवान् प्रभु (मित्रावरुणा) अत्यंत प्रिय, सर्वश्रेष्ठ प्रभु (अश्विना) सूर्य-चन्द्रादि को उत्पन्न करने वाले सर्वव्यापक प्रभु (भगम्) भजनीय सेवनीय प्रभु (पूषणम्) पुष्टिकर्त्ता प्रभु (ब्रह्मणस्पतिम्) अपने उपासक, वेद और ब्रह्माण्ड का पालन करने वाले प्रभु (सोमम्) शांतस्वरुप अन्तर्यामी प्रेरक प्रभु (उत) और (रुद्रम्) पापियों को रुलाने हारे और सर्वरोगनाशक प्रभु की (हवामहे) (हुवेम) हम स्तुति करते हैं, इस जीवन को देने के लिये, अपनी कृपा हम पर रखने के लिये हृदय से धन्यवाद करते हैं, कृतज्ञ होते हैं और प्रभु की गद-गद हो हृदय से प्रशंसा करते हैं।

प्रातः वंदन

तव वन्दन हे ओम् करें हम।
तव पूजन हे ओम् करें हम।।
तव आश्रय की छाया पाकर,
शीतल सुख उपभोग करें हम।। तव वन्दन.........
पाप शैल को तोड़ गिरावें,
वेदाज्ञा इक शीश धरें हम।। तव वन्दन.........
राग द्वेष को दूर भगाकर,
प्रेम मन्त्र का पाठ पढ़ें हम।। तव वन्दन.........
फूले ऋषिवर की फुलवारी,
विद्या-मधु का पान करें हम।। तव वन्दन.........

भजन

हम सब मिलके आये, दाता तेरे दरबार
भर दे झोली सबकी, तेरे पूर्ण भण्डार
लेकर दिल में फरियाद, करते हम तुमको याद
जब हों मुश्किल की घडियाँ, मांगे तुम से इमदाद
सबसे बढ़के ऊँचा, जग में तेरा दरबार
भर दे झोली सबकी, तेरे पूर्ण भंडार

हम सब मिलके आये, दाता तेरे दरबार
भर दे झोली सबकी, तेरे पूर्ण भंडार
चाहे दिन हो विपरीत, होवे तुमसे ही प्रीत
सच्ची श्रद्धा से गावे, तेरी भक्ति के गीत
होवे सबका प्रभु जी, तेरे चरणों में प्यार
भर दे झोली सबकी, तेरे पूर्ण भंडार

होवे जब संध्याकाल, होके निर्मल तत्काल
अपना मस्तक झुका के करके तेरा ख्याल
तेरे दर पे आकर, बैठे सारा परिवार
भर दे झोली सबकी, तेरे पूर्ण भंडार
हम सब मिलके आये, दाता तेरे दरबार
भर दे झोली सबकी, तेरे पूर्ण भंडार

हम सब मिलके आये, दाता तेरे दरबार
भर दे झोली सबकी, तेरे पूर्ण भंडार

भजन

आओ मिलके विचार करें,
पहले हम आप सुधरें, फिर औरों का सुधार करें
ऐसा जीवन हमारा हो, चांद सितारों से बढ़कर उजियारा हो,
आओ मिलके विचार करें ....

बचें पाप की कमाई से, सदा शुभ कर्म करें,
रहें दूर बुराई से,
आओ मिलके विचार करें ....

सब यहाँ रह जाएगा, दिया होगा जो हाथ से,
वही साथ में जाएगा,
आओ मिलके विचार करें ....

भगवान को याद करो, जीवन कीमती है,
इसे ना बर्बाद करो,
आओ मिलके विचार करें ....

सब हैं मेहमान यहाँ, करके भलाई जो गए,
हैं उनके निशान यहाँ,
आओ मिलके विचार करें ....

दिल किसी का दुखाना ना, सब में प्रभु है बसता
उससे ठेस लगाना ना,
यह बात बतानी है, ओ पाप ना कर बंदियां,
प्रभु अंतर्यामी है
जो तू पाप कमाएगा, एक दिन याद रखना

फल करनी का पायेगा,
हीरा जन्म जो पाया है, फिर नहीं मिलना
अगर इसको गँवाया है,
क्या भरोसा जिन्दगी का, फिर-फिर नहीं यह मिलना
यह तो बुलबुला पानी का,
आओ मिलके विचार करें ....

यही कसूर है मेरा

हर पल, हर स्थल मुझे साथ है तेरा,
फिर भी कामादि अरिदल ने कैसे
मुझ अन्तर में डाल रखा है डेरा।
अरे, कोई दोष होगा मेरा।
निश्चित, कोई कसूर होगा मेरा।

टिमटिमाता अन्तर में है, प्रेरणादीप तेरा
फिर भी अविद्यान्धकार ने, कैसे
चारों ओर डाल रखा है घेरा।
अरे कोई दोष होगा मेरा।
निश्चित, कोई कसूर होगा मेरा।

करुणासागर तू उत्कर्ष चाहता है मेरा
पर माया की चकाचौंध में खो गया था ऐसे
की विमूढ़-सा मैं भूल गया था, स्वरूप मेरा।
किंचित्, यही दोष है मेरा।
निश्चित यही कसूर है मेरा

रमण नावलीकर,
झण्डा चौक, नावली, जिला आनन्द (गुजरात)

वैदिक सन्ध्या

ओं भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्।।

आचमनमन्त्रः

ओं शन्नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये। शंयोरभिस्रवन्तु नः।।1।।

इन्द्रियस्पर्शमन्त्राः

ओं वाक् वाक्। ओं प्राणः प्राणः। ओं चक्षुश्चक्षुः। ओं श्रोत्रम् श्रोत्रम्। ओं नाभिः। ओं हृदयम्। ओं कण्ठः। ओं शिरः। ओं बाहुभ्यां यशोबलम्। ओं करतलकरपृष्ठे।।2।।

मार्जनमन्त्राः

ओं भूः पुनातु शिरसि। ओं भुवः पुनातु नेत्रयोः। ओं स्वः पुनातु कण्ठे। ओं महः पुनातु हृदये। ओं जनः पुनातु नाभ्याम्। ओं तपः पुनातु पादयोः। ओं सत्यं पुनातु पुनः शिरसि। ओं खं ब्रह्म पुनातु सर्वत्र।। 3 ।।

।। प्राणायाममन्त्राः ।।

ओं भूः। ओं भुवः। ओं स्वः। ओं महः। ओं जनः। ओं तपः। ओं सत्यम् ।। 4।।

।। अघमर्षणमन्त्राः ।।

ओं ऋतं च सत्यं चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत।
ततो रात्र्यजायत ततः समुद्रो अर्णवः।।
ओं समुद्रादर्णवादधि सवंत्सरो अजायत।
अहोरात्राणि विदधद्विश्वस्य मिषतो वशी।।
ओं सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत्।
दिवं च पृथिवीं चान्तरिक्षमथो स्वः।।

मनसापरिक्रमामन्त्राः

ओं प्राची दिगग्निरधिपतिरसितो रक्षितादित्या इषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः।।

ओं दक्षिणा दिगन्द्रोऽधिपतिस्तिरश्चिराजी रक्षिता पितर इषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु।
यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः।।

ओं प्रतीची दिग्वरुणोऽधिपतिः पृदाकू रक्षितान्नमिषवः।
तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु।
यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः।।

ओं उदीची दिक् सोमोऽधिपतिः स्वजो रक्षिताशनिरिषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः।।

ओं ध्रुवा दिग्विष्णुरधिपतिः कल्माषग्रीवो रक्षिता वीरुध इषवः।
तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु।
यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः।।

ओं ऊर्ध्वा दिग् बृहस्पतिरधिपतिः श्वित्रो रक्षिता वर्षमिषवः।
तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु।
यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ।।

।। अथोपस्थानमन्त्राः ।।

ओं उद्वयं तमसस्परि स्वः पश्यन्त उत्तरम्। देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम् ।।
ओं उदुत्यं जातवेदसं देवं वहन्ति केतवः। दृशे विश्वाय सूर्यम्।
ओं चित्रं देवानामुदगादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः। आ प्रा द्यावापृथिवीऽ अन्तरिक्षं सूर्यऽ आत्मा जगतस्तस्थुषश्च स्वाहा।
ओं तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत् पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतं शृणुयाम शरदः शतं प्रब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात्।।

गायत्रीमन्त्रः

ओं भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्।।

अथ समर्पणम्

हे ईश्वर दयानिधे ! भवत्कृपयाऽनेन जपोपासनादिकर्मणा धर्मार्थकाममोक्षाणां सद्यः सिद्धिर्भवेन्नः।।

नमस्कारमन्त्रः

ओं नमः शम्भवाय च मयोभवाय च नमः शंकराय च मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय च।।

इति ब्रह्मयज्ञ

वैदिक यज्ञ विधि

अथ ईश्वरस्तुतिप्रार्थनोपासनामन्त्राः

१ ओं विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव। यद् भद्रं तन्न आसुव।।१।।
२. ओं हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्।
स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम।।२।।
३. ओं य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवाः
यस्य छायाऽमृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम।। ३।।
४. ओं यः प्राणतो निमिषतो महित्वैक इद्राजा जगतो बभूव।
य ईशे अस्य द्विपदश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम।। ४।।
५. ओं येन द्यौरुग्रा पृथिवी च दृढ़ा येन स्व स्तभितं येन नाकः।
यो अन्तरिक्षे रजसो विमानः कस्मै देवाय हविषा विधेम।। ५।।
६. ओं प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परि ता बभूव।
यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम्।। ६।।
७. ओं स नो बन्धुर्जनिता स विधाता धामानि वेद भुवनानि विश्वा।
यत्र देवा अमृतमानशानास्तृतीये धामन्नध्यैरयन्त।। ७।।

८. ओम् अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नम उक्तिं विधेम।।८।।

आचमनमन्त्राः

ओम् अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा।। १।। ओम् अमृतापिधानमसि स्वाहा।। २।।
ओं सत्यं यशः श्रीर्मयि श्रीः श्रयतां स्वाहा।। ३।।

अङ्गस्पर्शमन्त्राः

ओं वाङ्म आस्येऽस्तु।। ओं नसोर्मे प्राणोऽस्तु। ओम् अक्ष्णोर्मे चक्षरस्तु।।
ओं कर्णयोर्मे श्रोत्रमस्तु।। ओं बाह्वोर्मे बलमस्तु।। ओम् ऊर्वोर्म ओजोऽस्तु।।
ओम् अरिष्टानि मेऽङ्गानि तनूस्तन्वा मे सह सन्तु।।

अग्निप्रज्ज्वलनमन्त्रः

ओं भूर्भुवः स्वः।।

अग्न्याधानमन्त्रः

ओं भूर्भुवः स्वद्यौरिव भूम्ना पृथिवीव वरिम्णा। तस्यास्ते पृथिवि देवयजनि
पृष्ठेऽग्निमन्नादमन्नाद्यायादधे।।

अग्नि प्रदीप्त मन्त्र

ओम् उद्बुध्यस्वाग्ने प्रतिजागृहि त्वमिष्टापूर्त्ते सँसृजेथामयं च।
अस्मिन्त्सधस्थे अध्युत्तरस्मिन् विश्वे देवा यजमानश्चसीदत।।

समिधाधानमन्त्राः

ओम् अयन्त इध्म आत्मा जातवेदस्तेनेध्यस्व वर्धस्व चेद्ध वर्धय चास्मान्
प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन समेधय स्वाहा।। इदमग्नये जातवेदसे-इदं
न मम।।१।

ओं समिधाग्निं दुवस्यत घृतैर्बोधयतातिथिम्।
आस्मिन् हव्या जुहोतन स्वाहा।। इदमग्नये-इदं न मम।।२।।
ओं सुसमिद्धाय शोचिषे घृतं तीव्रं जुहोतन। अग्नये जातवेदसे स्वाहा।।
इदमग्नये जातवेदसे-इदं न मम।। ३।।   दोनों मन्त्रों से दूसरी
ओं तन्त्वा समिद्भिरङ्गिरो घृतेन वर्धयामसि।
बृहच्छोचा यविष्ठ्य स्वाहा।। इदमग्नयेऽङ्गिरसे-इदं न मम।। ४।।

नीचे लिखे मन्त्र से घृत की पाँच आहुतियाँ देवें-

ओम् अयन्त इध्म आत्मा जातवेदस्तेनेध्यस्व वर्धस्व चेद्ध वर्धय चास्मान्
प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन समेधय स्वाहा।।
इदमग्नये जातवेदसे-इदं न मम।। १।।

जलप्रसेचनमन्त्राः

ओम् अदितेऽनुमन्यस्व ।। १ ।। ओम् अनुमतेऽनुमन्यस्व ।।२ ।। ओं सरस्वत्यनुमन्यस्व ।।३ ।। ओं देव सवितः प्रसुव यज्ञं प्रसुव यज्ञपतिं भगाय। दिव्यो गन्धर्वः केतपूः केतन्नःपुनातु वाचस्पतिर्वाचं नः स्वदतु ।। ४ ।।

आघारावाज्याहुतिमन्त्राः

ओम् अग्नये स्वाहा। इदमग्नये - इदं न मम ।। १ ।।
ओं सोमाय स्वाहा। इदं सोमाय-इदं न मम ।। २ ।।

आज्यभागाहुतिमन्त्राः

ओं प्रजापतये स्वाहा। इदं प्रजापतये-इदं न मम।
ओम् इन्द्राय स्वाहा। इदमिन्द्राय-इदं न मम।
ओं सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा ।। १ ।।
ओं सूर्यो वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा ।। २ ।।
ओं ज्योतिः सूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा ।। ३ ।।
ओं सजुर्देवेन सवित्रा सजूरुषसेन्द्रवत्या। जुषाणः सूर्यो वेतु स्वाहा ।। ४ ।।
ओम् अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा ।। १ ।। ओम् अग्निर्वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा ।। २ ।। ओम् अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा ।। ३ ।। तीसरी मौन आहुति
ओं सजूर्देवेन सवित्रा सजूरात्र्येन्द्रवत्या। जुषाणो अग्निर्वेतु स्वाहा ।। ४ ।।
ओं भूरग्नये प्राणाय स्वाहा। इदमग्नये प्राणाय-इदं न मम ।। १ ।।
ओं भुवर्वायवेऽपानाय स्वाहा। इदं वायवेऽपानाय-इदं न मम ।।२ ।।
ओं स्वरादित्याय व्यानाय स्वाहा। इदमादित्याय व्यानाय - इदं न मम ।। ३ ।।
ओं भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः प्राणापानव्यानेभ्यः स्वाहा।
इदमग्निवाय्वादित्येभ्यः प्राणापानव्यानेभ्यः - इदं न मम ।। ४ ।।
ओम् आपो ज्योति रसोऽमृतं ब्रह्मभूर्भुवः स्वरों स्वाहा ।। ओं यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते तया मामद्य मेधयाऽग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा ।।
ओं विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव। यद् भद्रं तन्न आ सुव स्वाहा ।।
ओम् अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नम उक्तिं विधेम स्वाहा ।।
ओं भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि।
धियो यो नः प्रचोदयात् ।। (तीन बार)

पूर्णाहुतिमन्त्रः

निम्न मन्त्र को तीन बार बोलकर पूर्णाहुति करें।। ओं सर्वं वै पूर्णं स्वाहा।